R.N.I. No. 2321/57
ओ३म्
रजि. सं. MTR नं. 04/2025-27
नबम्वर 2025
अंक 10

तपोभूमि

मासिक

श्री सुरेशचन्द्र आर्य

का 26 अक्टूबर 2025 को महाप्रयाण

सम्पादकीय

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान आदरणीय श्री सुरेशचन्द्र आर्य का महाप्रयाण

सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सुरेशचन्द्र आर्य का निधन 26 अक्टूबर 2025 को हो गया। इस दु:खद समाचार को सुनकर सम्पूर्ण आर्य जगत् में शोक की लहर व्याप्त हो गयी। मथुरा में वेद मन्दिर श्री विरजानन्द ट्रस्ट के प्रांगण में सभी जनपद के आर्यों, ट्रस्ट के पदाधिकारियों एवं गुरुकुल वृन्दावन के ब्रह्मचारियों व अध्यापकगण तथा डी. ए. वी. इण्टर कालेज के छात्र एवं अध्यापकों ने एकत्रित होकर आदरणीय सुरेशचन्द्र आर्य के निधन पर शोक व्यक्त किया। सभी ने उन्हें श्रद्धांजलि अर्पित करके मृतक की आत्मा को शान्ति प्रदान करने के लिए ईश्वर से प्रार्थना व शोक सन्तप्त परिवार को इस दारुण दु:ख को सहन करने के लिए सम्बल प्रदान करने की प्रार्थना की। सभी ने मौन रहकर श्रद्धांजलि दी और संस्था के प्रति किये उनके अतुलनीय योगदान को स्मरण किया।

माननीय सुरेशचन्द्र आर्य मूल रूप से मथुरा के निवासी थे। उनके पूज्य पिताजी श्री बंशीधर अग्रवाल श्री विरजानन्द ट्रस्ट के आजीवन सदस्य व प्रधान रहे। महर्षि दयानन्द के अनन्य भक्त आर्यजगत के प्रसिद्ध लेखक व प्रखर वक्ता आदरणीय आचार्य प्रेमभिक्षु जी महाराज के अनन्य सहयोगी रहे। आदरणीय श्री बंशीधर जी का पूरा परिवार आर्य विचारधारा का ध्वजवाहक रहा। यह सारा श्रेय श्री सुरेशचन्द्र आर्य के पिता श्री बंशीधर जी को जाता है। हमारे माननीय श्री सुरेशचन्द्र जी आर्य उनके ज्येष्ठ पुत्र थे। उन्होंने भी अपने पूज्य पिताजी के आदर्शों और विचारधारा को न केवल अपने जीवन में अपनाया अपितु आर्य विचारधारा को सर्वात्मना समर्पित होकर आगे बढ़ाया। इसी का परिणाम था कि माननीय श्री सुरेशचन्द्र जी आर्य ने शिरोमणि सार्वदेशिक सभा का प्रधान बनकर गौरव को बढ़ाया और संसार में उसे पुष्पित और पल्लवित करने के लिए तन, मन, धन से यथाशक्ति सहयोग दिया। वे श्री विरजानन्द ट्रस्ट के आधार स्तम्भ और अग्रणी सहायक रहे। सत्य प्रकाशन को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने सत्य प्रकाशन के जीर्ण शीर्ण भवन का उद्धार किया तथा सत्य प्रकाशन के अत्यन्त उपयोगी साहित्य को जन-जन तक पहुँचाने के लिए धन का खजाना ही खोल दिया। पूज्य आचार्य जी का लिखा हुआ साहित्य जो शुद्ध साहित्य सीरीज के नाम से आर्य जगत् की अमूल्य धरोहर थी, धन के अभाव के कारण प्रकाशित नहीं हो पा रहा था उन्होंने उस साहित्य की महत्ता को समझा और उसे प्रकाशित करने का संकल्प लेकर प्रकाशित करवाया उन्होंने अपने पूज्य पिताजी की स्मृति में शुद्ध रामायण, शुद्ध कृष्णायन,

शेष पृष्ठ संख्या 35 पर-

तपोभूमि

ओ३म् वयं जयेम (ऋक्०)

शारीरिक, आत्मिक और सामाजिक कल्याण की साधिका

(आर्य जगत में सर्वाधिक लोकप्रिय मासिक)

वर्ष–71 संवत्सर 2082 नवम्बर 2025 अंक 10

*
संस्थापक
स्व0 आचार्य प्रेमभिक्षु

*
संपादक
आचार्य स्वदेश
मोबा. 9456811519

*
व्यवस्थापक
कन्हैयालाल आर्य
मोबा. 9759804182

*
नवम्बर 2025

*
सृष्टि संवत्
1960853126

*
दयानन्दाब्द: 201

*
प्रकाशक
सत्य प्रकाशन, मथुरा

अनुक्रमणिका

लेख–कविता		पृष्ठ संख्या
वेदवाणी	–डॉ0 रामनाथ वेदालंकार	4–5
ईश्वर प्राप्ति	–पण्डित रामचन्द्र देहलवी	6–7
अपची गण्डमाला चिकित्सा	–स्वामी ब्रह्ममुनि परिब्राजक	8–10
हृदयेश्वर !	–	11–12
चारो ओर से हृदय पवित्र करो		
हिम्मत और धृती	–हनुमान प्रसाद शर्मा	13–14
ब्रह्मचर्य	–आचार्य ब्रह्मदेव	15–18
हमारा अध: पतन	–नाथूराम शंकर शर्मा	19–22
महाशय भरतसिंह	–	23–27
सत्यार्थ प्रकाश की महत्ता	–रामेन्द्र कुमार आर्य	28–31
प्रणव परिचय	–स्वामी सर्वदानन्द महाराज	32–33
चतुर्वेद पारायण यज्ञ	–	34

❊❊❊

वार्षिक शुल्क 200/– पन्द्रह वर्ष के लिये शुल्क 2100/–

वेदवाणी

लेखकः डॉ0 रामनाथ वेदालंकार

प्रकट भी और गुह्य भी

आवि सन्निहितं गुहा जरन्नाम महत्पदम्।
तत्रेदं सर्वमापितमेजत्प्राणत्प्रतिष्ठितम्।।

–अथर्व0 10/8/6

शब्दार्थः–

(आविः सत्) प्रकट होता हुआ भी (गुहा निहितम्) गुहा में निहित है, अर्थात् गुह्य है, (जरत् नाम) जरत् उसका नाम है, (महत् पदम्) उसका पद महान् है। (तत्र) उसमें (इदं सर्वम्) यह सब (आ अर्पितम्) आकार अर्पित है, जो (एजत्) गति करता है, (प्राणत्) साँस लेता है, और (प्रतिष्ठितम्) स्थावर है।

भावार्थः–

क्या तुम किसी ऐसी वस्तु को जानते हो जो गुफा के अन्दर छिपी हो, फिर भी प्रकट हो? नहीं जानते, तो सुनो, वेद बतला रहा है। वह वस्तु ज्येष्ठ ब्रह्म है। ज्येष्ठ ब्रह्म फूल, पत्ती, तरु, लता, नदी, समुद्र, बादल, बिजली, सूर्य, नक्षत्र सर्वत्र प्रकट है। जिनके अन्दर देखने की शक्ति है, उन्हें वह सर्वत्र दीख जाता है। जब जलकणों से भरी शीतल मन्द–मन्द बयार चलती हुई तन को गुदगुदाती है, तब प्रभुभक्तों को उसमें उसका संचालक ज्येष्ठ ब्रह्म दीख जाता है। जब आदित्य की रश्मियाँ भूमण्डल को ताप और प्रकाश देती हैं, तब प्रभुभक्तों को आदित्य के अन्दर ज्येष्ठ ब्रह्म बैठा दिखायी देता है। जब बादल से रिमझिम वर्षा की झड़ी लगती है, तब प्रभु–प्रेमियों को उसमें उसका कर्ता ज्येष्ठ ब्रह्म ही दृष्टिगोचर होता है। जब हरे–हरे तरुओं में रंग–बिरंगे पुष्प निकलते हैं, तब प्रभु के अनुरागी लोग उसमें ज्येष्ठ ब्रह्म की लीला का ही निरूपण करते हैं। इस प्रकार ज्येष्ठ ब्रह्म प्रकट है, किन्तु अशरीरी होने से आँख उसे प्रत्यक्ष नहीं देख सकती, इस कारण वह गुह्य है, गुहा में निहित है। उसका नाम 'जरत्' है। 'जरत्' शब्द अर्चनार्थक तथा वृद्धयर्थक जृ धातु से निष्पन्न होता है। ज्येष्ठ ब्रह्म अर्चनीय एवं स्तवनीय होने के कारण और सर्वाधिक अनुभवी पुराण पुरुष होने के कारण 'जरत्' कहलाता है। वह स्वयं भी सत्करणीय सज्जनों को शुभ कर्मफल प्रदान करके उनका सत्कार करता है, वेदवाक्यों द्वारा पदार्थों की यथार्थ वर्णन रूप स्तुति कर रहा है और सबके शरीरों को यथासमय जरावस्था प्राप्त कराता है, इस कारण भी 'जरत्' कहलाता है। वह स्वयं भी सत्करणीय सज्जनों को शुभ कर्मफल प्रदान करके उनका सत्कार करता है, वेदवाक्यों द्वारा

पदार्थों की यथार्थ वर्णन रूप स्तुति कर रहा है और सबके शरीरों को यथासमय जरावस्था प्राप्त कराता है, इस कारण भी 'जरत्' कहलाता है। उस ज्येष्ठ ब्रह्म का पद बहुत महान् है–'महत् पदम्'। वह राजराजेश्वर है, न केवल हमारी पृथिवी का या हमारे सौर जगत् का, अपितु सकल ब्रह्माण्ड का कुलाधिपति है। हमें पदोन्नति के लिए अपना मानसिक आवेदनपत्र उसी को देना चाहिए, वही हमें हमारे वर्तमान आध्यात्मिक स्तर से उठाकर हमारी पदोन्नति कर सकता है।

इस सम्पूर्ण जगतीतल में जो भी गति करनेवाले ग्रह, उपग्रह, सूर्य आदि छोटे–बड़े पिण्ड हैं, जो सांस लेनेवाले प्राणी हैं, जो स्थावर पदार्थ हैं, वे अपनी सत्ता के लिए उसी ज्येष्ठ ब्रह्म को समर्पित हैं, उसी के आश्रय से स्थित हैं। आओ, हम भी उसी ज्येष्ठ ब्रह्म का आश्रय पकड़ें, उसी के पुजारी बनें।

तपोभूमि मासिक के पाठकों से विनम्र निवेदन

तपोभूमि' मासिक पत्रिका प्रतिमाह आप तक पहुँच रही है। हमारा हर सम्भव प्रयास यही रहता है कि पत्रिका में उच्चकोटि के विद्वानों के सारगर्भित लेख प्रकाशित करके आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के सिद्धान्तों के अनुसार प्रचार करते हुये यह पत्रिका जन–जन तक पहुँचे। ताकि वे इसका पूर्णतया लाभ प्राप्त कर सकें। लेकिन यह तभी सम्भव है जब आप सबका सहयोग हमें मिले।

'तपोभूमि' मासिक के पाठकों से निवेदन है कि जिन्होंने अपना वार्षिक शुल्क चालू वर्ष या पिछले वर्ष का शुल्क अभी तक नहीं भेजा है। वे शीघ्रातिशीघ्र शुल्क भिजवाने की व्यवस्था करें। वार्षिक शुल्क 200/– दो सौ रुपये तथा पन्द्रह वर्ष हेतु 2100/– दो हजार एक सौ रुपये भेजकर पत्रिका पढ़ने का लाभ उठायें।

हम आपको प्रति माह पत्रिका पहुँचाते रहेंगे। आपके सहयोग व हमारे परिश्रम से निरन्तरता बनी रहेगी और महर्षि दयानन्द सरस्वती जी व आर्यसमाज का प्रचार–प्रसार जन–जन तक भी होता रहेगा।

हमें अपने ग्राहक महानुभावों से यही अपेक्षा है कि बिना विघ्न कार्य सुचारू रूप से चलता रहे। साथ ही यह भी प्रार्थना है कि आप अपने परिश्रम से नवीन ग्राहक बनवाने का सौभाग्य प्राप्त करें।

–धनराशि भेजने हेतु बैंक का नाम व पता एवं खाता संख्या–

इण्डियन ओवरसीज बैंक

शाखा युग निर्माण योजना, गायत्री तपोभूमि, जयसिंहपुरा, मथुरा

I F S C Code- IOBA 0001441

'सत्य प्रकाशन' खाता संख्या– 14410100002341

दान देने हेतु– श्री विरजानन्द ट्रस्ट' खाता संख्या– 14410100000351

सत्साहित्य का प्रचार प्रसार करना ही राष्ट्र की सर्वोत्तम सेवा है।

गतांक से आगे–

ईश्वर प्राप्ति

लेखकः पण्डित रामचन्द्र देहलवी

यदि कहो इन्द्रियों को इन्द्रियों से देखते हैं तो आत्माश्रय दोष है अर्थात् स्वयं ही दृश्य वस्तु और स्वयं ही देखने का साधन नहीं हो सकता। यदि कहो हम दर्पण में अपनी आंख को देखते हैं इसलिए आंख का होना आंख से ही प्रतीत होता है, परन्तु यह कथन सत्य नहीं क्योंकि दर्पण में आंख नहीं दीखती किन्तु आँख का आभास होता है उससे अनुमान के द्वारा जानना तो मान सकते हैं, परन्तु यह कहना कि आँख से आँख को देखते हैं सत्य नहीं, किन्तु आँख से आँख का आभास को देखकर उससे आँख को होने के अनुमान करते हैं कि यह सत्य होगा। अस्तु, आँख का तो अनुमान से ही ज्ञान हो गया, परन्तु रसनेन्द्रिय का किससे ज्ञान होगा। न तो वह रूप है जो आँख से दीखे और न शब्द है जिसका कान से ज्ञान हो, प्रयोजन यह है कि रसना इन्द्रिय का ज्ञान किसी इन्द्रिय से नहीं हो सकता। ऐसे ही अन्येन्द्रियों की दशा है, जिन इन्द्रियों से न दीखने के कारण परमात्मा की सत्ता को स्वीकार नहीं करते वे तुम्हारी इन्द्रियां ही प्रत्यक्ष नहीं, तुम्हारा सिद्धान्त स्वयमेव खण्डित होता है।

इसके अतिरिक्त जो पुरुष ऐसा विचार रखते हैं कि प्रत्यक्ष ही सब प्रमाणों का मूल है और जिस वस्तु का प्रत्यक्ष न हो उसका अभाव है वे बहुत ही भ्रान्ति में पड़े हैं, क्योंकि प्रत्यक्ष से किसी वस्तु का अनुमान के बिना ज्ञान हो ही नहीं सकता। प्रत्येक वस्तु के एक ही भाग का प्रत्यक्ष होता है शेष का अनुमान से ज्ञान हुआ करता है। जब केवल प्रत्यक्ष को ही प्रमाण माना जावे तो किसी वस्तु का भी ज्ञान न होगा, दूसरे अनेक ऐसी दशा हैं कि जिनके कारण वस्तुओं के विद्यमान होने पर भी उनका ज्ञान नहीं होता है। परन्तु वह नहीं दीखता; दूसरे बहुत दूर होने से, जैसे लन्दन यहाँ से नहीं दीखता; तीसरे अति सूक्ष्म होने से, जैसे परमाणु दृष्टि में नहीं आते, चौथे अति स्थूल होने से, जैसे हिमालय पहाड़ सम्पूर्ण नहीं दीखता, पांचवें वस्तु और इन्द्रिय के बीच में व्यवधान होने से, जैसे आँख पर हाथ रखने से कोई वस्तु भी नहीं दीखती अथवा भित्ति (दीवार) के दूसरी ओर की वस्तुएं नहीं दीखतीं; छठे इन्द्रियों में दोष हो जाने से, जैसे अन्धे को रूप का ज्ञान नहीं होता और बहरे को शब्द का ज्ञान नहीं होता इत्यादि, सातवें मन के अव्यवस्थित होने से भी नेत्रों के सामने चली जाने वाली वस्तुओं का ज्ञान नहीं होता। जब कि इन सात–दशाओं में विद्यमान वस्तुओं का भी प्रत्यक्ष नहीं होता तो प्रत्यक्ष न होने से ईश्वर की सत्ता को स्वीकार न करना सत्य नहीं किन्तु ईश्वर के होने में अनुमान और शब्द प्रमाण विद्यमान हैं।

वादी शंका करता है कि अनुमान किस प्रकार हो सकता है, क्योंकि जब तक व्याप्ति का ज्ञान न हो तब तक अनुमान नहीं हो सकता और व्याप्ति प्रत्यक्ष से ग्रहण की जाती है, ईश्वर का प्रत्यक्ष हुआ नहीं इसलिए व्याप्ति के न होने से अनुमान नहीं हो सकता। परन्तु वादी का यह कथन सत्य नहीं, क्योंकि यह

बात प्रत्यक्ष सिद्ध है कि प्रकृति में क्रिया नहीं जब तक चेतन उसको क्रिया देता है तब तक ही क्रिया होती है। जिसको प्रमाण मृतक और जीवित शरीर को देखने से स्पष्ट प्रतीत होता है अर्थात् जब तक क्रिया देने वाला क्रिया दे रहा था तब तक यह शरीर क्रिया कर रहा था और जब चेतन पृथक् हो गया तब वह शरीर जो प्रकृति से बना था क्रिया शून्य हो गया।

इससे स्पष्ट ज्ञात होता है कि प्राकृतिक वस्तु में क्रिया चेतन के बिना नहीं हो सकती, दूसरे जिस क्रिया में नियम पाया जावे वह तो किसी प्रकार नियम बनाने वाले के बिना हो ही नहीं सकता। जैसे कोई घड़ी 12 घंटे में और कोई सप्ताह में चाबी लेती है, वह घूम फिर कर फिर अपने उसी स्थान पर आ जाती है, इन उदाहरणों के होने से सम्यक्तया विद्वान् घड़ी बनाने वाले का प्रतीत होता है। कोई मनुष्य भी जिसको बुद्धि हो घड़ी को उत्पत्तिमान् मानकर किसी अचेतन वस्तु द्वारा बनाई हुई नहीं जानता, यद्यपि बनाने वाले को घड़ी बनाते हुए प्रत्यक्ष नहीं देखा, परन्तु अनुमान से घड़ी के कर्त्ता का होना उसे निश्चय हो जाता है। क्योंकि स्वाभाविक क्रिया वाली वस्तु में लौट कर उसी स्थान पर आने का नियम हो नहीं सकता। जैसे कि आगे चलना इंजन में भाप के होते हुए और किसी कल के बिगड़े जाने से रुक जाना भी सम्भव है, परन्तु अपने स्थान पर लौट आना किसी प्रकार सम्भव नहीं जब तक कोई चेतन न लौटावे। इसलिए जिन वस्तुओं की कुछ दिनों के पश्चात् फिर इसी स्थान पर लौट आने की शक्ति है, वह अवश्य ही चेतन के नियम से बंधी हुई है इसलिए सृष्टि के सम्पूर्ण भूगोल नियम के आधीन देखने में आते हैं।

चन्द्रमा, सूर्य, पृथ्वी और तारागण सबके बीच में नियत क्रिया के अतिरिक्त और किसी प्रकार का नियम प्रतीत नहीं होता जिसके नियमों की परीक्षा हम सौ वर्ष पहले से ही जान सकते हैं कि अमुक तिथि में इतने बजे सूर्य ग्रहण व चन्द्र ग्रहण होगा। जिस प्रकार हम घड़ी को देखकर प्रतीत कर सकते हैं कि इतनी देर के पश्चात् घड़ी की सुइयां अमुक स्थान पर मिल जायेंगी, ऐसे ही सूर्य और चन्द्र ग्रहण भी नियम के आधीन होने से हमें पहले से प्रतीत हो सकते हैं। यद्यपि घड़ी को बनाने वाला चेतन मनुष्य हमें सृष्टि में दीखता है जिससे व्याप्ति अर्थात् सम्बन्ध को जानकर हम कह सकते हैं कि इस नियमपूर्वक जगत् को बनाने वाला चेतन परमात्मा है। ❁

साधन निर्माण

विवेक का आदर करने पर देहाभिमान मिट जाएगा, जिसके मिटते ही भिन्नता मिट जाएगी। भिन्नता मिटते ही सब प्रकार के संघर्षों का अन्त हो जाएगा और फिर स्नेह की एकता प्राप्त होगी, जो वास्तव में मानवता है। स्नेह की एकता प्राप्त होने पर वास्तविक निर्दोषता प्राप्त होती है और निर्दोषता आ जाने पर एक ऐसे अनुपम जीवन की उपलब्धि होती है, जिसके लिए कोई परिस्थिति अपेक्षित नहीं है, अर्थात् जो सभी परिस्थितियों से अतीत है। बलवान उस जीवन को बल के सदुपयोग से और निर्बल उस जीवन को अन्तर-बाह्य मौन, अचिंतता एवं निवृत्ति से प्राप्त कर सकते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि प्रत्येक मानव अपनी योग्यतानुसार साधन-निर्माण करने में सर्वदा स्वतंत्र हैं, और यह नियम है कि प्राप्त योग्यतानुसार साधन का निर्माण करने पर साधक साध्य से अभिन्न हो जाता है।

अपची गण्डमाला चिकित्सा

लेखकः स्वामी ब्रह्ममुनि परिव्राजक

अपची गण्डमाला गलगण्ड की चिकित्सा के लिए अथर्ववेद में कई स्थल हैं। यहाँ हम उन सबके द्वारा उक्त चिकित्सा का वर्णन करते हैं। प्रथम अथर्ववेद काण्ड 7, सूक्त 74 व 78 को देते हैं–

अपचितां लोहिनीनां कृष्णा मातेति शुश्रुम।
मनुर्देवस्य मूलेन सर्वा विध्यमि ता अहम्॥ 1॥

अर्थ– (लोहिनीनाम्) रक्तमय लालरंग वाली (अपचिताम्) बुरी रीति से संचित या न पकनेवाली ग्रन्थियों–गांठों की (कृष्णा माता) कृष्ण रंगवाली–नीले दूषित रुधिर वाली नाड़ी उत्पन्न करनेवाली है (इति शुश्रुम) ऐसा सुनते हैं (अहम्) मैं (मुनेः देवस्य मूलेन) मुनिदेव की आड़ से–अगस्त्य वृक्ष की जड़ से या पलाश की जड़ से (ताः सर्वाः) उन सबको (विध्यामि) बींधता हूँ–चीरता हूँ–दबाता हूँ।

शरीर का रक्त अनेक कुपथ्यों से दूषित होकर कृष्ण सिरा अर्थात् दूषित रुधिर वाली नाड़ी में रुक जाने से प्रथम कृष्ण पुनः लाल रंग की उभरी हुई गांठें गले, कक्षा, वंक्षण में पाक को न प्राप्त होकर स्थिर–सी हो जाती हैं। वे अपरिचित–अपची गण्डमाला कहाती हैं। उनकी चिकित्सा 'मुनिदेव' की मूल से करना बतलाया है। 'मुनि, मुनिद्रुम, मुनिवृक्ष' अगस्त्य वृक्ष का नाम है–**"अगस्त्यः शीघ्रपुष्पः स्यादगतिस्तु मुनिद्रुमः व्रणारिः"** (राज निघण्टु) अगस्त्य गण्डमाला आदि को नष्ट करता है, यह बात आयुर्वेदिक निघण्टुओं में लिखी है। प्रथम ऊपर दिए पर्यायनामों में देखिए अगस्त्य को 'व्रणारि' अर्थात् व्रणों का शत्रु कहा है। इसके अतिरिक्त इसके गुण भी देखिए–**"अगस्त्यं शिशिरं गौल्यं त्रिदोषघ्नं श्रमापहम्। बलासकासवैवर्ण्यभूतघ्नं च बलापहम्।"** (राजनिघण्टु), इस वचन में अगस्त्य को 'गौल्य' अर्थात् गोलियों गण्डमालाग्रन्थियों के लिए हितकर बताया है। पलाश को भी 'वचक शब्दसिन्धु' में 'मुनि' कहा है "भैषज्यरत्नावली" में गलगण्ड की चिकित्सा में कहा भी है– **"तण्डुलोदकपिष्टेन मूलेन परिलेपितः। हस्तिकर्णपलाशस्य गलगण्डः प्रशाम्यति॥"** (भैषज्य रत्नावली)।

विध्याम्यासां प्रथमां विध्याम्युत मध्यमाम्।
इदं जघन्यामासामा छिनद्मि स्तुकामिव॥ 2॥

अर्थ– (आसाम्) इनमें से (प्रथमाम्) पहिली को (विध्यामि) बींधता हूँ–नष्ट करता हूँ (उत) तथा (मध्यमाम्) मध्यवाली को (विध्यामि) बींधता हूँ–नष्ट करता हूँ (आसाम्) इनमें से (जघन्याम्) निकृष्ट को (स्तुकाम्–इव) स्तोका अर्थात् छोटी फुंसी या मस्से की भांति (आछिनद्मि) छेदन करता हूँ।

इस सूक्त में अपची गण्डमाला की चिकित्सा अगस्त्य वृक्ष की जड़ तथा हस्तिकर्ण पलाश के

द्वारा करने का विधान है। उसके स्वरस का पान तथा उससे अपची आदि का प्रक्षालन एवं चूर्ण आदि का सेवन करना चाहिए। अस्तु। अब और स्थल अथर्ववेद काण्ड 7, सूक्त 76 व 80 को भी देखें।

आसुस्रसः सुस्रसो असतीभ्यो असत्तराः।
सेहोररसतरा लवणाद् विक्लेदीयसीः।। 1।।

अर्थ– (सुस्रसः) बहुत बहने वाले पदार्थ से भी बढ़कर (सुस्रसः) बहुत बहने वाली (असतीभ्यः) दुष्ट–विरूप अर्थात् बुरी से भी (असत्तराः) दुष्टविरूप–बुरी तथा (सेहोः) कठोर–ठोस से भी (असत्तराः) सहीन–कठोर–ठोस, एवं (लवणात्) लवण से (विक्लेदीयसीः) विशेष क्लेदित होकर–निचुड़ती हुई (आ) आस्रवित हों–भली भांति साफ हो जावें।

यहाँ कहा गया है कि गलगण्ड आदि ग्रन्थियों में कुछ विकर्ण होकर स्रवित होने वाली होती हैं, कुछ न स्रवित होने वाली शुष्क होती हैं। उन सबको लवण अर्थात् सैन्धव लवण के ढेले से मलने, घिसने या पिसा नमक बुरकने से वे गीली होकर उनसे सब दूषित रुधिर, पीप आदि बाहर निकल कर अच्छी हो जाती हैं। उक्त ग्रंथियों की चिकित्सा लवण के प्रयोग सुश्रुत में बतलाई भी है– **''स सैन्धवैः क्षौद्रघृतप्रगाढैः परोत्तरैनेनमभिप्रशोध्य''** (सुश्रुत चि0 अ0 18/17)।

या ग्रैव्या अपचितोऽथो या उपपक्ष्याः।
विजाम्नि या अपचितः स्वयंस्रसः।। 2।।

अर्थ– (याः) जो (ग्रैव्याः) ग्रीवा में होने वाली (अथ–उ) और (याः) जो (उपपक्ष्याः) भुजाओं के समीप कांख में होने वाली (अपचितः) गण्डग्रन्थियां–गण्डमाला अपची है (याः) जो (विजाम्नि) गुह्यप्रदेश के समीप वंक्षण में (स्वयंस्रसः) स्वयं स्रवित होने वाली (अपचितः) गण्डग्रन्थियां गण्डमाला अपची हैं वे सब लवण के प्रयोग से शुद्ध हो जाती हैं।

मन्त्र में बतलाया है कि तीन स्थानों में गण्ड–गण्डमाला–अपची होती हैं जो कि ग्रीवा, कांख और वंक्षण में कही है। ऐसा ही ''माधवनिदान'' में भी कहा है–**''कर्कन्धुकोलामलकप्रमाणैः कक्षांसमन्यागलवंक्षणेषु। मेदः कफाभ्यां चिरमन्दपाकैः स्याद् गण्डमाला बहुभिश्च गण्डैः। ते ग्रन्थयः केचिदवाप्तपाकाः स्रवन्ति नश्यन्ति भवन्ति चान्ये। कालानुबन्धं चिरमादधाति सैवापचीति प्रवदन्ति तज्ज्ञाः।।** (माधवनिदान 38/8, 9)।

अपची गण्डमालाएं ग्रीवा, कक्ष, वंक्षण (जांघ की सन्धि) में होती हैं तथा उनकी चिकित्सा लवण के द्वारा करने को इस सूक्त में कहा है। अब एक और स्थल देते हैं जो अथर्व काण्ड 6, सूक्त 25 है–

पंच च याः पंचाशच्च संयन्ति मन्या अभि।
इतस्ताः सर्वा नश्यन्तु वाका अपचितामिव।। 1।।

अर्थ– (अपचिताम्–इव) अपचितों में–गण्डमालाओं में (याः) जो (पंच च पंचाशत् च) पचपन

अपचितें गण्डमालाएं (मन्या अभि संयन्ति) मन्याओं–गलनाड़ियों के प्रति हो जाती हैं (ताः सर्वा) उन सबको (इतः) यहाँ से (वाकाः) वक के अवयव–अगस्त्य वृक्ष के मूलादिभाग (नश्यन्तु) नष्ट करें।

अगस्त्य वृक्ष का नाम 'वक' है– (वक) "अगस्तिवृक्षे" (वैद्यक शब्द सिन्धुः)। अगस्त्य वृक्ष में मन्या नाड़ी के आश्रित होने वाली गण्डमाला की गांठों को नष्ट करने का गुण है–"अगस्त्यः शिशिरं गौल्यं त्रिदोषघ्नं श्रमापहम्" (राज नि0)। यहाँ अगस्त्य 'गौल्य' अर्थात् गोलियों का हितकर अर्थात् गोली–रोगनाशक कहा है, जैसे हृद्य–हृदयरोगनाशक कहा है।

सप्त च या सप्ततिश्च संयन्ति ग्रव्या अभि। इतस्ताः।। 2।।

अर्थ– (याः सप्त च सप्ततिश्च) अपचितों–गण्डमालाओं में जो सतहत्तर अपचितें–गण्डमालाएं (ग्रैव्या अभि संयन्ति) ग्रीवा नाड़ियों की ओर हो जाती हैं (ताः सर्वाः) उन सबको यहाँ से वक के अवयव–अगस्त्य वृक्ष के मूल आदि भाग नष्ट करें।

नव च या नवतिश्च संयन्ति स्कन्ध्या अभि। इतस्ताः।। 3।।

अर्थ– (या नव च नवतिश्च) अपचितों–गण्डमालाओं में जो निन्यानवे पचितें–गण्डमालाएं (स्कन्ध्या अभि संयन्ति) कन्धे की नाड़ियों की ओर हो जाती हैं (ताः सर्वाः) उन सबको यहाँ से वक के अवयव–अगस्त्य वृक्ष के मूल आदि भाग नष्ट करें।

इस सूक्त में बताया गया है कि जो अपचित गण्डमालाएं मन्या ग्रीवा कन्धे की नाड़ियों के आश्रित हो जाती हैं वे अगस्त्य वृक्ष के मूल आदि भागों के स्वरस का पान, उससे प्रक्षालन और उसके चूर्ण आदि के सेवन से नष्ट हो जाती हैं। ❁

सेवा है भक्ति का सार

तपते तवे पर ठण्डे पानी के चन्द छींटे भले ही 'छत्र' की आवाज के साथ विलीन हो जाती हों, लेकिन तवे का तापमान कुछ तो कम कर ही जाती हैं। सेवाभाव भी यही है। सेवा शब्दों से नहीं होती और न सेवा का वर्णन शब्द कर पाते हैं। मानवता की सेवा करने वाले हाथ, धर्म की बात करने वाले होठों से कहीं श्रेष्ठ हैं। सेवा भक्ति का सार है। गीता में कहा है, 'जो सब जीवों का हित चिंतन करते हैं, वे मुझे पाते हैं।' सेवा में हम जितना स्वयं को लुटाते हैं, उतना ही हमारा हृदय महानता से भर जाता है। सेवा से मानव चेतना असाधारण रूप से विकसित होती है और असीम आनन्द मिलता है।

सेवा देने का भाव प्रमुख है। देने के लिए ही लेना है और लेने के लिए ही देना है। देने का भाव कल्याणकारी और लेने का भाव अमंगलकारी है। सेवा करने से व्यवहार भी उत्तम होता है और मोह–माया भी कम हो जाती है। सारे सांसारिक सम्बन्ध सेवा के लिए ही हैं। स्वार्थ का त्याग करके दूसरों का हित करना श्रेष्ठ है। परहित के समान कोई धर्म और पर–पीड़ा जैसा कोई अधर्म नहीं है– **परहित सरिस धर्म नहिं भाई।**

हृदयेश्वर ! चारों ओर से हृदय पवित्र करो

त्वमग्ने द्युभिस्त्वमाशुशुक्षणिस्त्वमद्भ्यस्त्वमश्मनस्परि।
त्वं वनेभ्यस्त्वमोषधिभ्यस्त्वं नृणाँ नृपते जायसे शुचिः।। –ऋ0 2/1/1

संसार की ठोकरों से पीड़ित मनुष्य जीवन रूपी मार्ग का पथिक व्याकुल होकर थकान दूर करने के लिए मार्ग के मध्य में ठहर गया है। खड़ा नहीं हो सकता, बैठता है तो आराम नहीं, लेटता है तो चैन नहीं। अन्दर से ऐसी ज्वाला भभक-भभक कर उठती है कि दम नहीं लेने देती। पथिक फिर चल देता है। आँखें फिर रूप के अन्दर खिंची चली जाती हैं। कान फिर शब्दों के दास बन रहे हैं, पग-2 पर फिर ठोकरें लग रही हैं। पथिक की बड़ी दीन, शौचनीय दशा है। हा, इस नरक-धाम से किस प्रकार छुटकारा हो? नगर को छोड़कर ग्राम का आश्रय लिया, ग्राम को छोड़ कर जंगल की राह ली, किन्तु क्या दग्ध हृदय शान्त हुआ? अन्दर से दुर्गन्ध की आँधी सी उठ रही है और तड़पा रही है अन्दर शान्ति मिलते न देखकर फिर बहिर्मुख होता है। वहाँ अनगिनत पथिक चले जाते दिखाई देते हैं। कोई काँप रहा है, कोई लकड़ी के सहारे चल रहा है, कोई चिन्ता में निमग्न जा रहा है, चेहरे अपने से ज्यादह पीले पड़े हुए देखता है। कुछ समय के लिये शान्ति सी प्रतीत होती है। सामूहिक दुःख भी, दुःखी से दुःखी आत्मा को एक पल के लिए तो शान्त कर ही देता है। इसी प्रकार की शान्ति इस पथिक के हृदय में होती है।

अब तमोगुण का पूरा राज्य हो गया, रज का चिह्न भी बाकी नहीं रहा। जैसे कीड़े दुर्गन्ध में मस्त होते हैं उसी प्रकार की मस्ती पथिक में भी आ गई है। किन्तु अभी तक मरा नहीं, सिसक रहा है, हाथ पैर भी हिल रहे हैं, कुछ जान अभी बाकी है। कान अभी बहरे नहीं हुए। अकस्मात् एक चमत्कार सा दिखाई देता है। आँखें पूरी खोलता है, तो सामने दिव्य, शान्त मूर्ति खड़ी है। वह चन्द्र समान शीतल कान्ति, दग्ध हृदय को एक पल में शान्त कर देता है। पथिक उठकर चरणों में सिर नवाता है। महात्मा उपर्युक्त मन्त्र की भावना को करुणा रस में सने स्वर में कहते हैं-

'हे ज्ञान के भण्डार ! सर्व प्रकाशों से तुम वेगवान्, वायु से तुम, जलों से तुम, पर्वतों के शिखरों से तुम, जंगलों से तुम, औषधियों से तुम-हे मनुष्यो के पालक ! तुम मनुष्यों में पवित्रता उत्पन्न करते हो।'

अमृत का पान करता-2 पथिक गाढ़ निद्रा के आनन्द में मग्न हो जाता है। श्रम रहित होकर जब आँखें खोलता है, तो महात्मा का कुछ पता नहीं, किन्तु उसके हृदय में कुछ उदासीनता नहीं आती। महात्मा का भौतिक शरीर सामने न देखकर भी उसके आत्मा को अन्तःकरण से अनुभव करता है। वहीं प्रकाशमय रूप जो हृदय के अन्दर काम की भट्टी जला देते हैं। आँखों और अन्तःकरण के मलों को दूर कर रहे हैं। जिस सुन्दर रूप में नरक का दृश्य देखता था उसमें अब दैवी सौन्दर्य दृष्टिगोचर होता है, क्योंकि उसमें जगन्माता का प्रकाश स्वरूप दीख रहा है। जिस शब्द की आँधी से हृदय में हलचल मच

रही थी उसमें उसी जगज्जननी का संशोधक वेग प्रतीत हो रहा है। जिस ईश के दासत्व में शरीर और मन को नष्ट कर बैठे थे, उसकी पावन धारा अन्दर से सब मलों को दूर कर रही है। जो पर्वत शिखर भोग के लिये उचित स्थान समझे जाकर मद्य माँस तथा व्यभिचार के प्रलोभनों में फँसा, जीवित मनुष्यों को मुर्दा बना रहे थे, वे सब अपनी स्वच्छ शोभा से पाप कर्मों से घृणा दिला कर अपनी स्वच्छ वायु की गोद में लोरियाँ दे रहे हैं। जिन जंगलों में हिंसक पशुओं के घोर नाद हृदयों को दहलाते थे, उनके एक-2 पत्ते से प्रेम वर्षा की धारा बरस रही हैं। जिन औषधियों को सड़ाकर मनुष्य पागल हो रहे थे, उनकी सुगन्ध नासिकाओं को आह्लादित कर रही है।

कैसा आश्चर्यजनक भेद ? क्या था और क्या हो गया? जीवन यात्रा के पथिक ! अपने पथ-प्रदर्शक को भूल कर तूने अपनी कैसी दुर्दशा कर ली? अभी संभलने का समय है। नहीं, नहीं, संभलने का तो सदैव समय है। हम अपनी कुटिलता से कितनी बार उस प्रेम, उस पवित्रता, उस प्रकाश के स्रोत से अलग होने का प्रयत्न करते हैं, किन्तु क्या इतनी ही बार हमारे कुटिलता से खड़े किये हुए बन्धन को छिन्न-भिन्न करके वह अमृत का स्रोत हमें आनन्द प्रदान नहीं करता रहा। पथिक निराश मत हो ! शुद्धस्वरूप प्रकाशमय पिता, संसार की एक-2 घटना में शुद्धि का संचार कर रहे हैं। चाहे हम उन्हें छोड़ क्यों न दें, परन्तु वह हमें कभी नहीं त्यागते। तब भय को त्यागकर उसी की प्रेम भरी गोद में क्यों न चलें?

❀❀❀

आत्म-सन्तुष्टि

सत्संग माने मनुष्य का स्वधर्म। जो अपने द्वारा किया जाए, उसी को सत्संग कहते हैं। जब अपने बल का दुरुपयोग छोड़ दिया, सदुपयोग का फल और अभिमान छोड़ दिया तो आपका संसार से सम्बन्ध टूट गया। संसार का सम्बन्ध टूट गया, संसार नहीं छूट गया। संसार का सम्बन्ध ही बाधक है, संसार बाधक नहीं है हमारी साधना में। अब उस बाधा का नाश हो गया। जिस समय आप बल के दुरुपयोग को छोड़कर उसके फल और अभिमान को छोड़ देंगे, आप थोड़ी देर के लिए अपने को अपने में सन्तुष्ट पायेंगे। इसका अर्थ हुआ कि अब आप अपने में अपना जो जीवन है उसे पायेंगे, अपने में अपना जो परमात्मा है, उसे पायेंगे, अपने में अपनी जो दुःख निवृत्ति है उसे पायेंगे और अपने में अपना जो आनन्द है उसे पायेंगे। सीधी बात यह है कि बुराई रहित होकर, भलाई का फल और अभिमान छोड़कर साधक अपने में सन्तुष्ट होकर सब कुछ पा जाता है। ❀

महर्षि रमण की शिक्षा

महर्षि रमण के आश्रम के समीपवर्ती गाँव में एक अध्यापक रहते थे। एक बार अपने कौटुम्बिक जीवन से अत्यधिक क्षुब्ध होकर आत्महत्या करने की बात सोचने लगे। किसी निर्णय पर पहुँचने से पहले उन्होंने महर्षि की सम्मति जाननी चाहिए और पहुँच गए आश्रम। महर्षि रमण आश्रमवासियों के भोजन के लिए पत्तलें बना रहे थे। दिव्यद्रष्टा ऋषि ने अध्यापक महोदय के आने का अभिप्राय समझ लिया था। प्रणाम करने के उपरान्त अध्यापक बोले-भगवन् ! आप इन पत्तलों को इतने परिश्रम से बना रहे हैं और आश्रमवासी इनमें खाना खाकर फेंक देंगे।

महर्षि मुस्कुराते हुए बोले-सो तो ठीक है, वस्तु का पूर्ण उपयोग हो जाने पर उसे फेंक देना बुरी बात नहीं, बुरा तो तब है जब उसे अच्छी अवस्था में ही खराब करके फेंक दिया जाए। अध्यापक महोदय को महर्षि का मर्मस्पर्शी अभिप्राय समझ में आ गया और उन्होंने आत्महत्या करने का इरादा छोड़ दिया तब आनन्दित हो गए और सेवा में लग गए। ❀

हिम्मत और धृती

लेखकः– हनुमान प्रसाद शर्मा

एक बार एक सियार ने किसी को कहते हुए यह शब्द सुन लिया कि–"हिम्मत मर्दा मदद खुदा।" उसने इसे अपना आदर्श बना लिया। हर बात में अपनी स्त्री सियारिन से जहाँ कोई बात आ पड़ती तो कह उठता था कि–"हिम्मत मर्दा मदद खुदा।" कुछ दिनों के बाद उसकी स्त्री सियारिन गर्भिणी हुई। उसने अपने पति सियार से कहा कि–"अब मुझे कहीं ऐसे स्थान में ले चलो जहाँ मैं अपने बच्चों को अच्छी तरह से उत्पन्न करूँ और मुझे सुख मिले।" सियार ने सियारिन को ले जाकर एक सिंह की सथरी में, जहाँ सिंह ने अपने आराम के लिए फूस फास बिछा रक्खा था, ठहराया और कहा–"तू यहाँ अपने बच्चे उत्पन्न कर।" शेर कई दिन तक न आया। इतने में सियारिन ने बच्चे उत्पन्न किये। एक दिन सियार और सियारिन अपने बच्चों के पास बैठे ही थे कि इतने में सिंह डहकता हुआ आया। सियार ने शेर को आते देख अपनी स्त्री सियारिन से कहा कि–"अपने बच्चे शीघ्र उठा कर चल, जल्दी भाग चलें।" सियारिन ने कहा कि–"आज वह 'हिम्मत मर्दा मदद खुदा' कहाँ गया?" सियार को बड़ी शर्म मालूम हुई और वह अपने आगे के दोनों पैर ऊपर को उठा खड़ा हो गया। शेर इसे देख हैरान था कि यह कौन है! यद्यपि मैं रात दिन जंगल ही में रहता और जंगल का राजा हूँ पर ऐसा जन्तु मैंने आज तक नहीं देखा कि इतने में सियार अपनी स्त्री सियारिन से बोला, कि–"अरी वनकूकरी!" सियारिन ने उत्तर दिया–"कहो, सब जग के बैरी!" यह शब्द सुन सिंह के होश हवास उड़ गये और वह सोचने लगा कि सब जग में तो मैं भी हूँ, अरे यह कोई बड़ा ही बलवान जन्तु है। ऐसा समझ सिंह भाग खड़ा हुआ। सियार के सन्मुख से सिंह को भागते देख जंगल भर के जीवों को आश्चर्य हुआ कि आज गजब हो गया कि सियारों के सम्मुख से सिंह भागने लगे। एक बन्दर जो यह चरित्र देख रहा था, वनराज शेर के सन्मुख जा हाथ जोड़ बोला कि–"महाराज, यह सियार है, जिसके सामने से आप भगे जाते हैं।" शेर ने कहा–"तू बिल्कुल झूठ कह रहा है, क्या सियार हमने देखे नहीं? सियार ऐसा नहीं होता।" बन्दर ने कहा–"महाराज, वह ऊपर को पैर उठाये खड़ा था। आप चलिये, वह अभी भाग जायगा।" बन्दर के बहुत समझाने पर शेर ने बन्दर से कहा–"अच्छा तू आगे चल तो चलूँ।" बन्दर तो यह निश्चय जानता ही था कि वहाँ सियार है, वह निर्भय होकर आगे चला। सियार ने जाना कि यह बन्दर जान का घातक है, लेकिन अपने उस वाक्य को याद कर कि–"हिम्मत मर्दा मदद खुदा" फिर खड़ा हो गया। जब बन्दर और शेर दोनों कुछ समीप पहुँचे तब फिर सियार ने कहा–"अरी वनकूकरी !" सियारिन ने कहा–"कहो, सब जग के बैरी!" सियार ने कहा–"तेरे बच्चे क्यों रोते हैं।" सियारिन ने कहा–"मेरे बच्चे शेर खाने को माँगते हैं।" वनराज शेर

यह सुन कर फिर भाग खड़ा हुआ। बन्दर यह दशा देख हैरान था कि जब शेर इस सियार के सन्मुख से भागता है तो हम लोगों का कैसे गुजारा होगा, अतः बन्दर फिर शेर के पीछे पड़ा और हाथ जोड़ कर बोला कि–"महाराज, आप व्यर्थ भाग उठते हो। वह निश्चय सियार है, आपके चलने से ही भाग जायगा।" सिंह ने कहा कि–'सियार के बच्चे कहीं सिंह खाने को मांगते हैं?" बन्दर ने कहा–"महाराज, यही तो गीदड़ भभकी है।" अतः शेर को बन्दर ने जब बहुत समझाया तो शेर ने कहा–"अब की बार हम तब चलेंगे जब मेरी पूँछ से तू अपनी पूँछ बांध और तू आगे चल। नहीं तू जात का बन्दर बड़ा चालाक, तेरा क्या ठीक। मुझे वहाँ मौत के मुख में झोंक भाग खड़ा हो।" बन्दर को कुछ भय तो था ही नहीं, उसने वैसा ही किया और दोनों शेर की भाटी की ओर चले। जब सियार ने इन दोनों को इस भांति आते देखा तो कहा–"अब के प्राण गये, अब नहीं बच सकता।" परन्तु इसे अपनी कहावत फिर याद आई कि–"हिम्मत मर्दा मदद खुदा।" अतः यह फिर उसी भांति खड़ा हो गया और सियारिन से बोला–"अरी वनकूकरी!" सियारिन ने कहा–"कहो, सब जग के वैरी!" सियार ने कहा–"तेरे बच्चे क्यों रोते हैं?" सियारिन ने कहा–"मेरे शेर खाने को मांगते हैं।" सियार ने कहा–"तो तू गुस्सा क्यों होती है?" सियारिन ने कहा–"इसलिए कि बन्दर को भेजा था कि दो शेर ले आ, सो प्रथम तो वह आया ही बड़ी देर में है, दूसरे दो के बदले एक ही पूँछ में बांध के लाया है।" शेर इतना सुनते ही बन्दर की पूँछ तक उखाड़ के भाग खड़ा हुआ। सच है, हिम्मत मर्दा मदद खुदा।

बहुत से मनुष्य आपत्ति आने पर कुएँ में गिर पड़ते, जहर खा लेते, कोई आग लगने पर कोने में घुस पड़ते, कोई निकल कर रास्ता भूल प्राण दे देते, कितने ही शेर और भालू का नाम सुन काठ हो खिलौने से खड़े रह जाते और उन्हें आकर वे खा भी जाते हैं, कितने ही घबराये पथिकों के समूह दो चार डाकुओं से लूट लिये जाते हैं, पर एक धीर पुरुष सिंह के छक्के छुड़ा देता है। किसी ने ठीक कहा है–

त्याज्यं न धैर्य विधुरेपि काले,
धैर्यात्कदाचितं स्थिति माप्नुयात्सः।
यथा समुद्रेऽपि च पोतभंगो,
सायात्रिको वांछति तर्तु मेव॥

अर्थ– आपत्ति का समय आने पर भी धैर्य नहीं छोड़ना चाहिये, क्योंकि कदाचित् धैर्य से स्थिति प्राप्त हो जाय जैसे कि समुद्र में जहाज डूबने का समय आ जाने पर भी उद्योग करने पर बच जाता है।

❀❀❀

❀ मनुष्य के जीवन के एक क्षण का भी पता नहीं है, न जाने कब मृत्यु आ जाए। इसलिए अमुक स्थिति हो जाने पर ईश्वर का ध्यान करूँगा, ऐसी धारणा छोड़ देनी चाहिए और अभी जो जिस अवस्था में हो, उसी अवस्था में ईश्वर के शरणागत होकर ध्यान करना प्रारम्भ कर देना चाहिए।

ब्रह्मचर्य

लेखकः आचार्य ब्रह्मदेव जी

ब्रह्मचार्येति समिधा समिद्धः कार्ष्णं वसानो दीक्षितो दीर्घ श्मश्रुः।
स सद्यएति पर्वस्मा दुत्तरं समुद्रं लोकान्त्सं गृभ्य मुहुराचरिक्रत॥ 6॥

अर्थ– ब्रह्मचारी जो समिधा (के होम) से प्रदीप्त हुआ, काला मृगान पहने हुए, लम्बी दाढ़ी से युक्त हुआ दीक्षित के रूप में चलता है, वह शीघ्र पहले समुद्र (ब्रह्मचर्य आश्रम) से उत्तर समुद्र (गृहाश्रम) में चला जाता है, और लोकों को वश में करके बार-2 सुडौल बनाता रहता है।

नित्य प्रति समिधा के होम से जिसका तेज प्रचण्ड है। काला मृगान तपस्या और सादे जीवन का उपलक्षण है, लम्बी दाढ़ी पूर्ण यौवन का उपलक्षण है। बार-2 सुडौल बनाता रहता है, अर्थात् उनको धर्म पर खड़ा करता रहता है, और तीनों लोकों में विकार नहीं उत्पन्न होने देता।

ब्रह्मचारी जनयन् ब्रह्मापोलोकं प्रजापतिं परमेष्ठिनं विराजम्।
गर्भो भूत्वाऽमृतस्ययोना विन्द्रो भूत्वाऽसुरां स्ततर्ह॥ 7॥

अर्थ– ब्रह्मचारी वेद, (वेदोक्त) कर्म, कर्मफल और सर्वत्र प्रकाशमान प्रजा के अधिपति परमात्मा को प्रकट करता हुआ, अमृत (ब्रह्मचर्य वा ब्रह्म) के स्रोत में गर्भरूप होकर, इन्द्र (शक्तिशाली) बनकर असुरों के टुकड़े-2 उड़ा देता है।

ब्रह्मचर्येण तपसा राजा राष्ट्रं विरक्षति।
आचार्यो ब्रह्मचर्येण ब्रह्मचारिणमिच्छते॥ 17॥

अर्थ– ब्रह्मचर्य से और तप से राजा राष्ट्र की रक्षा करता है, और आचार्य ब्रह्मचर्य से ब्रह्मचारी की इच्छा करता है।

ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्।
अन ब्रह्मचर्येणा श्वो घासं जिगीषति॥ 18॥

अर्थ– ब्रह्मचर्य से कन्या युवापति को पाती है, ब्रह्मचर्य के पालन से पूर्ण और घोड़ा घास को जीतना चाहता है।

वेद में एक ओर जहाँ पुरुषों को ब्रह्मचर्य के पालने से पूर्ण युवा और विद्वान् बनकर विवाह करने की आज्ञा है, वैसे ही दूसरी ओर स्त्रियों को ब्रह्मचर्य पालन से युवति और विदुषी बनकर विवाह करने की आज्ञा है।

ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्यु मुपाघ्नत।
इन्द्रोह ब्रह्मचर्येण देवेभ्यः स्वराभरत्॥ 19॥

अर्थ– देवता ब्रह्मचर्य से और तप से मृत्यु को सदा मार हटाते हैं, इन्द्र ब्रह्मचर्य से देवताओं के लिए दिव्य प्रकाश लाता है।

पृथक् सर्वे प्रजापत्याः प्राणानात्मसु बिभ्रति।
तान्त्सर्वान् ब्रह्मरक्षति ब्रह्मचारिण्या भृतम्॥ 22॥

अर्थ– प्रजापति के सब पुत्र (देव, मनुष्य और असुर) अलग-2 अपने-2 शरीरों में प्राणों को धारण किये हुए हैं, उन सब की वह ब्रह्म (वेद) रक्षा करता है, जो ब्रह्मचारी में फला फूला है (ब्रह्मचारी से पढ़ा हुआ वेद सब प्राणियों के रक्षण में समर्थ है)।

ब्रह्मचारी ब्रह्म भ्राजद् बिभर्ति तस्मिन् देवा अधिविश्वे समोताः।
प्राणपानौ जनयन्नादव्यानं वाचं मनो हृदयं ब्रह्म मेधाम्॥ 24॥

अर्थ– ब्रह्मचारी चमकते हुए ब्रह्म (ईश्वर वा वेद) को धारण करता है, उस में सारे देवता इकटठे रहते हैं, ब्रह्मचारी प्राण अपान व्यान वाणी मन हृदय वेद और मेधा को प्रकट करता हुआ विचरता है।

चक्षुः श्रोत्रं यशो अस्मासुधेह्यन्नरेतो लोहितमुदरम्॥ 25॥
तानि कल्पद ब्रह्मचारी सलिलस्य पृष्ठे तपोऽतिष्ठत्त तप्यमानः समुद्रे।
स स्नातो बभ्रूः पिंगलः पृथिव्यां बहु रोचते॥ 26॥

अर्थ– (हे ब्रह्मचर्य) दृष्टि श्रुति यश अन्न बीज रुधिर उदर पाचन शक्ति) हममें स्थापन कर (अर्थात् ब्रह्मचर्य के ये फल हैं)।

ब्रह्मचारी इन सब वस्तुओं को अपने लिए तैयार कर लेता है, वह तप तपता हुआ समुद्र में जल की पीठ पर खड़ा हुआ है, वह (स्नातक बनकर) भूरे बालों वाला लाल रंगवाला पृथिवी पर बहुत चमकता है।

ब्रह्मचर्य के विषय में धर्म शास्त्र के उपदेश

गर्भाष्ठमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनायनम्।
गर्भादिकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः॥ 36॥ –(मनु अ0 7)
आषोडशाद् ब्राह्मण सावित्री नाति वर्तते।
आद्रा विंशात् क्षत्र बन्धोराचतुर्विंशते विंशः॥ 38॥
अत ऊर्ध्व त्रयोप्येते यथा काल मर्मस्कृताः।
सावित्री पतिता व्रात्या भवन्त्यार्य विगर्हिताः॥ 39॥
नैतेरपूतै विंधिवदापद्यपिहि कर्हिचित्।
ब्राह्मान् यौनांश्च सम्वन्धानाचरेद्ब्राह्मणः सह॥ 40॥

अर्थ– गर्भ से आठवें वर्ष ब्राह्मण का उपनयन करे, गर्भ से ग्यारहवें वर्ष क्षत्रिय का और गर्भ से बारहवें वर्ष वैश्य का। (यदि किसी विघ्न बाधा से इस मुख्य समय पर उपनयन न हो, तो) सोलह वर्ष तक ब्राह्मण के लिए बाईस तक क्षत्रिय के लिए और चौबीस तक वैश्य के लिए गायत्री के उपदेश का समय बना रहता है। इससे आगे ये तीनों, जिनके यथा समय संस्कार नहीं हुए, गायत्री से पतित हुए आर्यों से निन्दित व्रात्य (समुदाय से गिरे हुए) हो जाते हैं। यदि ये यथा विधि (प्रायश्चित करके) शुद्ध न हों, तो इनके साथ कोई भी ब्राह्मण (क्षत्रिय और वैश्य) वेद वा विवाह का सम्बन्ध कभी न करे।

ओंकार पूर्विकास्त्रिो महाव्याहृतयोऽव्यया:।
त्रिपदा चैव सावित्री विज्ञेयं ब्रह्मणो मुखम्।। –(मनु0 2/81)

अर्थ– ओं कार पूर्वक तीन अविनाशी महाव्याहृतियां (भू र्भुवः भर्गोदिवस्य धीमहि। धियो योनः प्रचोदयात्) यह ब्रह्म का मुख (वेद का आरम्भ, और ईश्वर प्राप्ति का द्वार) जानना चाहिये।

उपनीय तु यः शिष्यं वेद मध्यापयेद् द्विज:।
सकल्पं सरहस्यं च तमाचार्य प्रचक्षते।। 140।।

अर्थ– जो ब्राह्मण शिष्य का उपनयन करके उसको कल्प और रहस्य (कर्तव्य की विधि और उसके रहस्य तथाउपासना और ज्ञान के रहस्य) समेत वेद पढ़ाता है उसको आचार्य कहते हैं।

य आवृणोत्यवितथं ब्रह्मणा श्रवणा वुभौ।
स माता सपिता ज्ञेयस्तं न द्रुह्येत् कदाचन।। 144।।

अर्थ– जो वेद से दोनों कान यथार्थ भरता है, शिष्य उसको सदा माता और पिता जाने, उससे कभी द्रोह न करे। पढ़ाने में थोड़ा बहुत जो कुछ भी जो जिसका उपकार करता है।

अल्पं वा बहू वा यस्य श्रुतस्योपकरोति य:।
तमपीह गुरुं विद्याच्छ्रुतापक्रियया तया।। 149।।

अर्थ– पढ़ाने में थोड़ा बहुत जो कुछ भी जो जिसका उपकार करता है, उसको भी उस उपकार के कारण गुरु जाने।

ब्राह्मस्य जन्मन: कर्ता स्वधर्मस्य च शासिता।
बालोपि विमो वृद्धस्य पिता भवति धर्मत:।। 150।।

अर्थ– ब्राह्मजन्म का देने वाला और स्वधर्म का सिखलाने वाला ब्राह्मण बालक भी वृद्ध का भी धर्म से पिता है।

अध्यापयामास पितृन् शिशुरांगिरस: कवि:।
पुत्रका इति हो वाच ज्ञानेन परिगृह्यं तान्।। 151।।

अर्थ– अंगिरस के पुत्र कवि ने बालपन में अपने पितरों (चचों) को पढ़ाया, इस प्रकार ज्ञान से उन को नीचे करके 'हे पुत्रो' ऐसे कहा।

ते तमर्थमपृच्छन्त देवानागत मन्यवः।
देवाश्चैतान् समेत्योचुर्न्याय्यं वः शिशुरुक्तवान्॥ 152॥

अर्थ– उन को क्रोध आ गया, तब उन्होंने देवताओं से यह बात पूछी, देवताओं ने इकटठे होकर उन्हें कहा, बच्चे ने तुम्हें ठीक कहा है।

अज्ञो भवति वै बालः पिता भवति मन्त्रदः।
अज्ञं हि बालमित्याहुर्पितेत्येवतु मन्त्रदम्॥ 153॥

अर्थ– न जानने वाला निःसन्देह बालक होता है और अन्त का देने वाला पिता होता है, क्योंकि (ऋषि) बाल उस को कहते हैं जो अज्ञ है और पिता उसको कहते हैं, जो मन्त्र का देने वाला है।

न हायनै र्न पलितैर्नविप्तेन न बन्धुभिः।
ऋषयश्चक्रिरेधर्मे योऽनूचानः स नो महान्॥ 154॥

अर्थ– न वर्षों से, न श्वेतबालों से न धन से, न बन्धुओं से (बड़ा होता है), ऋषियों ने यह मर्यादा बना दी है, कि जो अंगों समेत वेद का जानने वाला है, वह हम में बड़ा है।

विप्राणां ज्ञानतो ज्यैष्ठ्यं क्षत्रियाणां तु वीर्यतः।
वैश्यानां धान्यधनतः शूद्राणामेव जन्मतः॥ 155॥

अर्थ– ब्राह्मणों में बड़प्पन ज्ञान से होता है, क्षत्रियों में वीरता से, वैश्यों में धन धान्य से, जन्म से केवल शूद्रों में।

न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः।
यो वै युवाप्यधीयानस्तं देवाः स्थविरं विदुः॥ 156॥

अर्थ– इस कारण से कोई वृद्ध नहीं माना जाता, कि उसका सिर श्वेत हो गया है, जो युवा भी विद्वान् है, उसको देवता वृद्ध जानते हैं। ❁

पाठकों से विनम्र निवेदन

'तपोभूमि' मासिक पत्रिका के पाठकों से विनम्र निवेदन है कि वर्ष **2024 तथा 2025** का वार्षिक शुल्क अविलम्ब **'सत्य प्रकाशन'** वेदमन्दिर, वृन्दावन मार्ग, मथुरा के कार्यालय को जमा करायें। आशा और विश्वास है कि पाठकगण अविलम्ब शुल्क भेजकर अपनी पत्रिका समयानुसार प्राप्त करते रहेंगे। जो महानुभाव ऑन लाइन द्वारा शुल्क जमा करते हैं वे फोन द्वारा कार्यालय को सूचित अवश्य करें ताकि उनका शुल्क जमा किया जा सके। **–व्यवस्थापक**

हमारा अधः पतन

रचयिताः नाथूराम शंकर शर्मा

(दोहा)

शंकर से न्यारे रहैं, वैदिक-धर्म विसार।
होड़ी होड़ा हम गिरे, पाप प्रमाद पसार।। 1।।

(कलाधरात्मक-मिलिन्दपाद)

प्रभु-शंकर मोह-शोक हारी। यम-रुद्र त्रिशूल-शक्ति धारी।।
टुक देख ! दयालु, न्यायकारी। गत-गौरव दुर्दशा हमारी।।
उपताप समीप आ रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं।। 1।।
जिसको सब देश जानते थे। अपना सिरमौर मानते थे।।
जिसने जग जीत मान पाया। अगुआ नव-खण्ड का कहाया।।
उस भारत को लजा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं।। 2।।
पहला युग पुण्य-कर्म का था। सुविचार प्रचार धर्म का था।।
जिसके यश की प्रतीक पाई। हरिचन्द-नरेश की सचाई।।
अब सूम ठगी सिखा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं।। 3।।
उपजा युग दूसरा प्रतापी । प्रकटे व्रत-शील और पापी।।
जिसकी सुप्रसिद्ध रीति जानी। समझी रघुनाथ की कहानी।।
अब रावण जी जला रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं।। 4।।
कर द्वापर कृष्ण की बड़ाई। रच भेद भिड़ा गया लड़ाई।।
अपना बल आप ही घटाया। छल का फल सर्व-नाश पाया।।
अबलों कुल मार खा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं।। 5।।

जब से कलि-काल कोप आया। तब से भरपूर पाप छाया॥
कुल-कण्टक, प्राण ले रहे हैं। ठग दारुण-दु:ख दे रहे हैं॥
जड़, कर्म भले भुला रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 6॥

मुनि-राज मिलें न सिद्ध-योगी। अवनीश रहे न राज-भोगी॥
सब उद्यम खो गये हमारे। शुभ साधन सो गये हमारे॥
खल खेल बुरे खिला रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 7॥

सुविचार, विवेक, धर्म-निष्ठा, प्रण-पालन प्रेम की प्रतिष्ठा॥
बल, वित्त, सुधार, सत्य-सत्ता। सबको विष दे मरी महत्ता॥
मति-हीन, हँसी करा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 8॥

तज वैदिक-धर्म-धीरता को। भटकें भट विश्व-वीरता को॥
निधि निर्मल-न्याय की न भावे। सुविधा न सुधार की सुहावे॥
अनभिज्ञ सुधी कहा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 9॥

अनमोल असंख्य ग्रन्थ खोये। बन मायिक वेद भी बिगोये॥
इतिहास मिलें नहीं पुराने। अनुकूल नवीन तन्त्र माने॥
हठ-वाद हठी बना रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 10॥

व्रत-शील सुबोध हैं न शर्मा। रण रोप लड़ें न वीर वर्मा॥
धन-राशि न गुप्त गाढ़ते हैं। गुरु-भाव न दास काढ़ते हैं॥
चतुराश्रम ढोंग ढा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 11॥

निगमागम छान बीन छोड़े। उपदेश बना दिये गपोड़े॥
अब जो विधि जाति में भरी है। उसकी जड़ श्री बिरादरी है॥
यश उद्धत-पंच पा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 12॥

भ्रम-भेद भरी पवित्रता है। छल से भरपूर मित्रता है॥
मन-गेह घने घमण्ड का है। डर केवल राज-दण्ड का है॥

मत पन्थ नये नचा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 13॥

मत-भेद पंसार फूट फैली। बिन मेल रही न एक शैली॥
सुख-भोग भगाय रोग जागे। पकड़े अघ-ओघ ने अभागे॥
दिन संकट के बिता रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 14॥

उपदेशक लोग लूटते हैं। कटु-भाषण-बाण छूटते हैं॥
हित-साधना हा ! न सूझते हैं। जड़ जाल पसार जूझते हैं॥
अड़ ऊत अड़े अड़ा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 15॥

कचलम्पट पेट के पुजारी। विषयी बन बाल-ब्रह्मचारी॥
मुख से सब "सोहमस्मि" बोलें। तन धार अनेक ब्रह्म डोलें॥
जड़ जन्म वृथा बिता रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 16॥

वह योग समाधि-सिद्धि धारी। वह जीवन-वेद रोगहारी॥
समझें जिनके न अंग पूरे। अब साधु, गदारि हैं अधूरे॥
रच दम्भ दशा दुरा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 17॥

विचरें बन ज्योतिषी भरारे। चमकें भ्रम-जाल-जन्य तारे॥
उतरे ग्रह वेध की नली में। अटके अब जन्म-कुण्डली में॥
दिन पोच, खरे बता रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 18॥

कवि राजसमाज में न बोलें। धनहीन सुधी उदास डोलें॥
गुण-ग्राहक कल्पवृक्ष सूखे। भटकें भट, शिल्पकार भूखे॥
शठ आदर से अघा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 19॥

समझे तन-भार भूषणों को। दमके दमकाय दूषणों को॥
कविता रस-भाव तोल-त्यागे। हलकाय कहीं न और आगे॥
गढ़ तुक्कड़ गीत गा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 20॥

विरले ध्रुव-धर्म धारते हैं। शुभ-कर्म नहीं विसारते हैं॥
तरसें वह वीर रोटियों को। चिथड़ें न मिलें लंगोटियों को॥
कुलबोर-प्रथा पुजा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 21॥

बल-हीन अबोध बाल बच्चे। करतूत विचार के न सच्चे॥
डरपोक सुधार क्या करेंगे। लघु-जीवन भोगते मरेंगे॥
घटिया कुनबे बढ़ा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 22॥

बल-व्याकरणीय वाद को है। फिर न्याय नृसिंह-नाद को है॥
अभिमान मढ़ी उपाधि पाई। अब शेष रही न पण्डिताई॥
गुण-गौरव यों गमा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 23॥

बुध शिक्षक दो प्रकार के हैं। अवतार परोपकार के हैं॥
उपहार करे प्रदान शिक्षा। बस, वेतन और धर्म-भिक्षा॥
भर पेट भला मना रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 24॥

समझे, पढ़ अंक, बीज, रेखा। फल भिन्न सिलेट से न देखा॥
क्षितिगोल, खगोल, जानते हैं। पर शब्द-प्रमाण मानते हैं॥
बुध-वेष वृथा बना रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 25॥

बहु ग्रन्थ रटे न पाठ छोड़े। गटके गुरु-ज्ञान के गपोड़े॥
अधबैस उमंग में गमाई। पर उत्तम नौकरी न पाई॥
जड़ उद्यम की जमा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 26॥

ठमके सब ठौर राज-भाषा। थिरके न थकी समाज-भाषा॥
लिपि बैल-मुतान सी खरी है। पर पोच प्रशस्त-नागरी है॥
मिल मिस्टर यों मिटा रहे हैं।
उलटे हम हाय ! जा रहे हैं॥ 27॥

❀❀❀

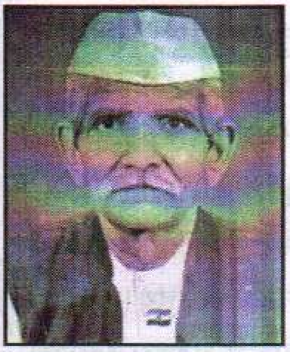

महाशय भरतसिंह

(महान् स्वतंत्रता सेनानी मथुरा जनपद के प्रथम पंक्ति के सेनानी)

ग्राम– **जाव**, तहसील– **छाता**, जिला– **मथुरा**। (प्रपौत्र **हरीश आर्य**, मोबा. 8171265122)

जन्म– **26 जनवरी सन् 1895**

स्व.– **03. 07. 1985**

संक्षिप्त जीवन परिचय–गौरव गाथा

(1) आजादी की लड़ाई में लोग शहीद हुए, आजीवन जेल काटी तो फांसी चूमे, तो तनहाई की सजा भी भुगतनी पड़ी, काल कोठरी की अंधेरी में जीवन गुजारना पड़ा, तो काले पानी की सजा मिली, घर परिवार सम्पत्ति बर्बाद हुए। **आजादी की लड़ाई में मथुरा जनपद के जाव गांव के महाशय भरतसिंह प्रथम पंक्ति के क्रांतिकारी त्यागी एवं संघर्षशील देशभक्त हुए। स्वतंत्र्य युद्धों के सेनानियों में इनका प्रमुख स्थान रहा है।**

(2) प्रारम्भ में इन्होंने आर्यसमाज की गतिविधियों में भाग लेना प्रारम्भ किया। **ये प्रारम्भ से ही राष्ट्रीय विचारधारा से प्रभावित हुए और देश की स्वतंत्रता के सेनानी बन गए।**

(3) **कोसी कांड सन् 1930 में 1 साल 3 माह सजा।** भरतसिंह जी पर 147, 148, 302, 395, 149 और 332 दफाएँ लगाई गई।

(4) **व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन** में भाग लेने पर सन् 1941 में 01 वर्ष कठोर कारावास व 50 रुपये जुर्माना हुआ (मथुरा जेल)

(5) सन् 1942 की क्रान्ति में **महाशय भरतसिंह जी** ने ग्राम खेटावटा व कामर में **बम बनाने** का कार्य किया था। **बम विस्फोट से डाकखाना पीलीकोठी को उड़ाया–** इस जोखिम को उठोने के लिए भेष भी बदलने पड़े, फिर **अंग्रेजों के कार्यालयों को उड़ाया।**

(6) सन् 1942 में **4000 रुपये का सामूहिक जुर्माना तार काटने पर।**

(7) सन् 1942 ई. की जनक्रांति **"करो या मरो"** के नारे के साथ **जनपद मथुरा के क्रांतिकारी दल के प्रथम पंक्ति के सदस्य रहे** तथा केवाना क्षेत्र में पुलिस द्वारा घेरकर गिरफ्तार कर 20 अप्रैल 1943 को मथुरा जेल भेजा गया जिसमें इन्हें **01 साल का कठोर कारावास** दण्ड सहित मिला।

(8) **भारत छोड़ो आन्दोलन** के दौरान सन् 1943 में 1 वर्ष के कारावास का दण्ड मिला।

(9) तोड़फोड़ की घटनाओं के कारण **35 DIR के रेलवे एक्ट** के अनुसार 2200 रुपये का सामूहिक जुर्माना।

(10) क्रांति के दिनों में ये अपने साथियों के जत्थों में **विदेशी शासन के विरुद्ध विध्वंसक कार्यों में मथुरा जिले के अनेक भागों में घूमते रहे और अनेक कष्ट सहन करते रहे।**

(11) **सन् 1947 ई. के मेवात दंगा** ग्रस्त क्षेत्रों में गांव गांव में पंचायत कर शांति स्थापित कराने में अपना पूर्ण योगदान दिया और सन् 1948 में जिला बोर्ड के सदस्य निर्वाचित हुये।

(12) **स्वतंत्रता के पच्चीसवें वर्ष** के अवसर पर स्वतंत्रता संग्राम में स्मरणीय योगदान के लिए राष्ट्र की ओर से **प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने महाशय भरतसिंह को दिनांक 3 अगस्त 1972 को ताम्रपत्र भेंट कर सम्मान किया।**

(13) श्री भरतसिंह महाशय जी को स्वतंत्रता संग्राम में स्मरणीय योगदान के लिए **ग्राम स्वावलंबी शिक्षा समिति, मथुरा (उ. प्र.) द्वारा मथुरा जनपद के वयोवृध्द सेनानी के रूप में 1 अक्टूबर 1983 को सम्मानार्थ ताम्रपत्र भेंट किया।**

(14) "स्वतंत्रता युद्धों में जनपदीय सेनानी" नामक पुस्तक के लेखक चिंतामणि शुक्ल ने पेज नं. 180 पर लिखा है-**भरतसिंह ने हमेशा क्रान्तिकारियों की आर्थिक मद्द की** इसलिए स्वतंत्रता जगत में आप सहायता देने में **भामाशाह** की तरह प्रसिद्ध रहेंगे।

(15) सन् 1942 ई. में इनके **घर की कुर्की** हो गयी। इनका सारा सामान अंग्रेजी शासन ने कुर्क कर लिया तथा घर को फोड़कर चबूतरा बना दिया गया।

(16) **हिन्दी रक्षा आन्दोलन** सन् 1957 में 2 माह की सजा चंडीगढ़ जेल।

(17) **गौरक्षा आन्दोलन** सन् 1966 में 1 माह 10 दिन की सजा तिहाड़ जेल दिल्ली।

(18) निजाम हैदराबाद के अत्याचारों के खिलाफ सजा काटी (जेल गए)।

(19) **माया त्यागी कांड–** माया त्यागी कांड में चौधरी चरणसिंह जी के आह्वान पर उत्तर प्रदेश में जेल भरो आन्दोलन चला था। इसमें श्री महाशय भरतसिंह जी भी जेल गए थे (सन् 1980–81)।

(20) **किसान आन्दोलन** में कई बार जेल काटी।

(21) सन् 1922–23 में आर्यसमाज में रहकर छाता तहसील में **शुद्धि आन्दोलन** में भाग लेकर हिन्दुओं से बने मुसलमानों को पुनः हिन्दू बनाने में पूर्ण योगदान दिया।

(22) जिला परिषद मथुरा तथा **गुरुकुल विश्वविद्यालय वृन्दावन** कार्य कारिणी के सदस्य।

(23) आप आर्यसमाज मथुरा के जिलाध्यक्ष रहे तथा **आर्यसमाज के माध्यम से समाज में फैली कुरीतियों, पाखण्डों, ऊँच नीच, छुआछूत का निवारण** करने में तन मन धन से योगदान दिया (आर्यसमाज की गतिविधियों में आपका विशेष योगदान रहा है)।

(24) **जाति–प्रथा** की संकीर्णता को तोड़कर **पुत्री की शादी जादौन जाति में** सर्वप्रथम की (सन्

1961 में)।

(25) **छुआछूत** की भावना का विरोध किया।

(26) जाव गांव के **जीवन पर्यन्त प्रधान** रहकर विकास व समाज सेवा की आजीवन निर्विरोध प्रधान रहे। **(गांव में सड़क, विजली, पानी, पशु चिकित्सालय, डाकखाना, स्कूल आदि की सुविधाएं दिलाने में संघर्षरत रहे)।**

जब शरीर वृद्ध हो गया, चलने फिरने और आवागमन में परेशानी होने लगी तो **पंचायत बुलाकर सन् 1982 में निर्विरोध प्रधानी श्री खचेरा को सौंप दी।** वे त्याग की भावना का जीता जागता उदाहरण थे, उनके अन्दर परिवारवाद होता तो प्रधानी अपने परिवार में भी दे सकते थे परन्तु वे तो **विरले राष्ट्रभक्त** थे।

(27) **गठौना पाल के पंच रहे।**

(28) जेल अवधि में बड़े पुत्र की अन्त्येष्टि करने हेतु अवकाश मांगने पर जेलर द्वारा क्षमा मांगने व आजादी की लड़ाई में हिस्सा न लेने का प्रस्ताव रखा जिसे महाशय जी ने यह कहकर ठुकरा दिया कि **आजादी से बढ़कर नहीं है पुत्र, पुत्र तो और भी पैदा हो सकते हैं।**

(29) 26 जनवरी, 1948 को **महात्मा गांधी** जी से मिलकर समाज को आगे दिशा देने की योजनाओं के सम्बन्ध में विचार विमर्श किया गया।

(30) **भारत रत्न पूर्व प्रधानमंत्री चौधरी चरण सिंह जी के चहेते–** महाशय जी द्वारा चौधरी चरण सिंह जी से मिलकर कोकिलावन की सारी भूमि वन विभाग से वापस करायी। महाशय जी ने गांव में आर्य समाज के एक बड़े जलसे का आयोजन रखा जिसमें तात्कालिक प्रधानमंत्री चौधरी चरण को निमंत्रण दिया, जिसमें वे गांव में पधारे तो उन्हें महाशय जी द्वारा उनका **प्रिय भोज गौचनी की रोटी और लौनी घी** से भोजन कराया गया और स्वतंत्रता के संघर्षों को याद कर खूब आंसू बहाये थे।

(31) **MLA की टिकट का त्याग किया–** महाशय जी ने अपनी टिकट पर महाशय लक्खी सिंह को चुनाव लड़वाया। चुनाव जीतने में भरतसिंह जी ने महत्वपूर्ण भूमिका निभायी, उन्होंने चुनाव जिताने हेतु लक्खी सिंह जी का काफी आर्थिक रूप से सहयोग किया, जिस कारण वे चुनाव जीतकर विधायक बने। भरतसिंह जैसे त्यागी समाज सेवी सच्चे लोग समाज में बहुत कम मिलते हैं उनके अन्दर स्वार्थ लेश मात्र भी नहीं था।

(32) **समाज को फलीभूत देखने के लिए अपने और परिजनों की खुशियों को खुशी–खुशी दांव पर लगाने में कभी नहीं चूके–** सन् 1962 में गांव में चकबंदी हो रही थी तो पहले पूरे गांव के लोगों के चक कटवाए। सबसे बाद में आपने अपना चक कटवाया जो सबसे खराब जमीन थी। नाले के किनारे चक था जिसमें पानी भरा रहता था। चकबंदी के अधिकारियों और गांव के बहुत शुभचिंतकों ने महाशय जी से अच्छी जमीन में चक कटवाने को कहा और कहा कि खराब जमीन में कुछ भी नहीं होगा

और बच्चे जिन्दगी भर परेशान रहेंगे। लेकिन महाशय जी ने किसी की बात नहीं मानी।

महाशय जी का कहना था कि मैं अगर **अच्छी जगह पर चक लेता हूँ तो लोग यही कहेंगे कि महाशय जी ने अपने प्रभाव से अच्छी जमीन में चक कटवा लिया है।** ये कलंक में अपने सिर पर बांधना नहीं चाहता। आखिर इस खराब जमीन को भी तो कोई लेगा, जो लेगा वही मुझे कोसेगा।

वास्तव में हुआ भी यही इस जमीन में कुछ हुआ नहीं इसके परिजनों को पट्टे पर दूसरों की जमीन लेकर गुजारे के लिए खेती करनी पड़ी। प्रधानी भी गांव के अन्य परिवार को निर्विरोध दे गए थे। मतलब परिवार को कभी सुख सुविधाओं में नहीं पाला, त्याग की प्रतिमूर्ति थे महाशय जी।

ये था आदर्श महाशय भरतसिंह जी का जिनकी कथनी और करनी में कोई अन्तर नहीं था।

(33) **मथुरा जनपद के विध्वंसकारी दल में भरतसिंह जी–** सन् 1942 की "क्रांति करो या मरो" के दौरान ग्रामीण क्षेत्रों में विध्वंसकारी घटनाएं करने वाले युवकों का एक दल था। इन युवकों को अपनी जान की परवाह नहीं, परिवार के भरण पोषण की भी नहीं थी। **अंग्रेजों को भारत से उखाड़ फेंकने का इनके मन में एक तूफान था। भारत को आजाद कराने का इनके मन में दृढ़ विश्वास एवं पक्का इरादा था।**

इस दल के बारे में **"स्वतंत्रता युद्धों में मथुरा जनपदीय सेनानी एवं मथुरा जनपद का राजनैतिक इतिहास"** तथा **आचार्य जुगलकिशोर अभिनन्दन ग्रंथ नामक पुस्तकों के लेखक** ने पूर्ण विवरण देते बताया है कि– इस **विध्वंसकारी दल** में सरदार रणवीर सिंह मथुरा, **भरतसिंह जाव**, लाला जगन प्रसाद अडीग, श्यामलाल जैंत, रूपराम परखम, तुलसीराम शर्मा इरौली जुनारदार (मांट) आदि प्रमुख क्रांतिकारी युवक थे।

(34) **लेखक/प्रधान सम्पादक डॉ0 गोवर्धन लाल शुक्ल अपने लाला हरचनलाल गुप्त स्व0 सं0 से0 अभिनन्दन ग्रन्थ** में लिखते हैं–कोसी से नंदगांव जाने वाली सड़क के **गांव जाव के भरतसिंह के कर्मठ व्यक्तित्व को दूर–दूर तक कौन नहीं जानता?** अपने मार्ग और कार्य को वह आज भी नहीं छोड़ पाते। पर उस मार्ग और कार्य से अपने लिए उन्होंने क्या पाया? उनके त्याग और बलिदान के बदले में उनको क्या मिला?

कोई भी **राष्ट्र** उनको भूल नहीं सकता जिन्होंने उसको **स्वतंत्र कराने के लिए युद्ध किया** और जो आज भी उस स्वतंत्रता की रक्षा के लिए अपना सर्वस्व देने को प्रतिक्षण प्रस्तुत है। वे वीर है, वे पूजनीय है। उनको, उनके कार्यों को, ढका नहीं जा सकता, मिटाया नहीं जा सकता। **उन्होंने कुछ पाने के लिए सर्वस्व नष्ट नहीं किया था, गुलामी को वे सहन नहीं कर सके और उसको मिटाने के लिए वे चल पड़े थे।**

(35) **अतिथि सेवा के पुजारी थे महाशय भरतसिंह–** बिना नाश्ता अथवा भोजन के वे किसी को अपने घर से जाने नहीं देते थे। कभी 20–30 आदमी तक आ जाते थे सभी का भोजन बनता था।

महाशय जी की एक खासियत थी कि अतिथियों की सेवा के लिए खाने पीने का सामान की

पूरी व्यवस्था रखते थे। जब भी कोसी से आते थे तांगा भरकर सामान लाते थे।

(36) **महाशय भरतसिंह जी के बारे में स्वतंत्रता संग्राम सेनानियों के विचार–**

(1) मैं महाशय भरतसिंह जी के साथ स्वतंत्रता आन्दोलनों में जेलों में भी रहा, मैं उन्हें बहुत नजदीक से जानता हूँ कि वे अपनी बात के घनी थे, निर्भीक थे, उन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलनकारियों, क्रांतिकारियों की तन मन धन से सहायता की वे दयालु प्रवृत्ति उदारचित्त थे। इसलिए उन्होंने गरीबों, समाज के कमजोर लोगों की मदद की।

–श्री महाशय राजपाल स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, छाता जिला–मथुरा (उ0 प्र0)

(2) मैं महाशय जी के साथ जेल एवं आन्दोलनों में रहा हूँ मैं उन्हें बहुत नजदीक से जानता हूँ। बहुत ही गंभीर, बात के धनी, देश की आजादी के लिए पूरी तरह समर्पित थे। एक बार महाशय जी की घरवाली इनसे मिलने जेल गईं उस समय वह मथुरा जेल में थे। महाशय भरतसिंह के बड़े बेटे की मृत्यु इसी दौरान हो गयी थी लेकिन भरतसिंह बेटे के अन्तिम संस्कार में पहुंच नहीं पाए आदमी सूचना लेकर जेल गया था। जब इनकी घरवाली नारायणी देवी ने महाशय जी से जेल में मुलाकात की तो बातें करते हुये अपने बेटे की याद कर रो पड़ीं और कहा तुमने तो बेटे को आकर देखा भी नहीं उन्होंने समझाया तुमने उसका अन्तिम संस्कार कर दिया इसमें मैं ही क्या करता देश की नारियों ने इस देश की आजादी के लिए अपनी कुर्बानियां दी हैं। तुम भी भारत की वीर नारी हो तुम भी भारत की वीर नारी होकर रोती हो, बेटे तो और भी पैदा होंगे। लेकिन यह समय देश आजाद कराने का है। नारायणी देवी को साहस देकर विदा किया किन्तु अपने मन में बेटे मरने का कोई मलाल नहीं।

–श्री अनारसिंह स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, ग्राम–उस्पार जिला–मथुरा (उ0 प्र0)

(3) मैं किसी आन्दोलन में भरतसिंह जी के साथ नहीं रहा क्योंकि मैं उनसे बहुत छोटा हूँ लेकिन जनपद के स्वतंत्रता सेनानियों के साथ व सम्मेलनों में मुलाकात होती रहती थी। मैंने भरतसिंह जी के स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान बहादुरी एवं दिलेरी की बहुत कहानियाँ सुनी हैं उन्होंने क्रान्तिकारियों की मदद भी की थी। **–श्री भंवरसिंह स्वतंत्रता संग्राम सेनानी, गोवर्धन जिला–मथुरा (उ0 प्र0)**

(4) महाशय जी स्वतंत्रता आन्दोलन के कट्टर क्रान्तिकारी थे, वे अनेकों बार जेल गए। मैं महाशय जी के साथ सन् 1941 ई0 के व्यक्तिगत सत्याग्रह आन्दोलन में मथुरा जिला जेल में रहा था। कुछ समय बाद ही महाशय जी को आगरा जेल में भेज दिया गया था और मैं मथुरा जेल में ही रहा। आर्यसमाज के कार्यक्रमों में महाशय जी से अक्सर मुलाकात होती रहती थी। महाशय जी त्यागी पुरुष थे उन्होंने पैसा देकर स्वतंत्रता सेनानियों की मद्द की थी।

जहाँ भी स्वतंत्रता सेनानियों की बैठक होती अथवा जिलेभर के स्वतंत्रता सेनानी इकट्ठे होते वहीं भरतसिंह जी से मेरी मुलाकात होती। वैसे भरतसिंह जी अच्छे देशभक्त क्रान्तिकारी एवं समाजसेवी थे। **–श्री प्रेमसिंह स्वतंत्रता सेनानी, ग्राम–बलरई जिला–मथुरा (उ0 प्र0)** ❋

गतांक से आगे–

सत्यार्थ प्रकाश की महत्ता

लेखकः रामेन्द्र कुमार आर्य, सीतापुर (उ0 प्र0)

(4) सत्यार्थ प्रकाश की विशेषताएँ–

यह तमसो मा ज्योर्तिगमय की वैदिक परम्परा को पुनः प्रतिष्ठित करता है। यह वैचारिक क्रान्ति का अग्रदूत है, विचारोत्पादक का एक अनुपम प्रकाश स्तम्भ है। प्रत्येक विषय की वैज्ञानिक व्याख्या सत्यार्थ प्रकाश में है। सत्यार्थ प्रकाश का पाठक अन्ध भक्ति से छुटकारा पा जाता है। यह पाठकों की युक्ति से तार्किक क्षमता को उकसाकर संशयात्मा (तार्किक) बना देता है जिससे उन्हें तर्क की बीमारी हो जाती है। यह बीमारी ही स्वास्थ्य धार्मिकता का सच्चा लक्षण है। पाप क्षमा के सिद्धान्त न्याय धारणा के प्रतिकूल है। न्याय के अनुकूल दिया गया दण्ड ही व्यापक दृष्टि से दया का विशिष्ट रूप है। इसका पाठक पाताल से आकाश की ओर क्षण–2 मोक्ष का आनन्द उठाने लगता है। पाठक के हृदय में विशेष प्रसन्नता व गम्भीरता आती है। इसमें (1000) एक हजार पुस्तकों का सार है जिसमें 290 ग्रंथों के 1886 अकाट्य प्रमाण दिये गये हैं। आश्चर्य है महर्षि के स्वाध्याय पर। इसमें मानव जीवन के किसी भी पहलू को अछूता नहीं छोड़ा गया है। संसार भर के मानवों के दुःखों को दूर करने का हल सत्यार्थ प्रकाश बताता है सत्यार्थ प्रकाश ने स्वराज्य का संदेश भारतीयों को सुनाया आत्महीन बने हिन्दुओं में जीवनी शक्ति का संचार किया। अपने धर्म पर अभिमान करना अंध विश्वासों, अन्ध परम्पराओं, अंधभक्ति की जड़ों को काटने का प्रयास किया। फलस्वरूप ऐसे क्रान्तिकारी ग्रन्थ का ढोंगी पंडितों, मौलवियों, पादरियों और ढोंगी अल्पज्ञ हिन्दू तथाकथित महात्माओं ने इस कारण इसका विरोध किया कि यह ग्रंथ उनकी झूठी व अनुचित आय और मौज बहार पर चोट करता था। जनता को अंधविश्वासों में न फंसे रहने से जिनकी आय थी वे स्वार्थी लोग सत्यार्थ प्रकाश की शिक्षाओं को भला कैसे सहन कर सकते थे।

सत्यार्थ प्रकाश न केवल समस्त वेदों व वैदिक शास्त्रों से अभिभूषित सोमरस रूपी सार ही है। बल्कि समस्त वैदिक सत्य सिद्धान्तों का प्रतिपादन करके अवैदिक मिथ्या भ्रान्त मान्यताओं से उद्धृत गहन अंधकार से व्याप्त घोर वीथिकाओं में भटकते हुए पथिकों हेतु मार्गदर्शक है। ज्ञान विज्ञान के गन्वेषकों व धर्म जिज्ञासुओं के लिए अजस्र स्रोत है। धर्म के नाम से मूर्खानन्दों द्वारा बनाये गये झूठे गुरुओं के दुर्गों का विध्वंश करने के लिए तीक्ष्ण तर्क रूप एटम बम है। विषैले रक्त के भयंकर रोग से पीड़ित कराहते हुए धर्म रोगियों के लिए एक हाथ में सड़ें गले बदबू पूर्ण फोड़ों की सफाई के लिए तीक्ष्ण शाल्यास्त्र लिये हाथ तथा दूसरे हाथ में रोगों को समूल नष्ट करने वाली अमृतौषधि लिये कुशल

चिकित्सक कालजयी कृति व परिवार का सुरक्षा कवच है।

धार्मिक सामाजिक तथा आध्यात्मिक क्षेत्रों मे समस्त वैचारिक क्रान्ति के अग्रदूत इस अमर ग्रंथ को जिसने भी पढ़ा और अनुशीलन किया वह इसके जादू के तुल्य उज्ज्वल प्रभाव से प्रभावित हुए बिना नहीं रहा यह हिंसा घृणा, वैमनस्य, ईर्ष्या संकीर्णता आदि विघटनात्मक प्रवृयिों को नष्ट करके अहिंसा, धर्म,+ सत्य, ज्ञान व शान्ति का पाठ पढ़ाने वाला है। शिक्षा शिक्षक तथा शिक्षालय के आदर्श स्वरूप उद्घोषक होने से यह ग्रन्थ वर्तमान में उच्च कोटि के शिक्षाविदों के मस्तिष्कों में व्याप्त जटिल समस्याओं का सुन्दर समाधान है। भारत में ही नहीं बल्कि पूरे विश्व में बढ़ती हुई विघटनात्मक प्रवृत्तियों को रोककर संघटनात्मक वृत्तियों के उद्बोधनार्थ यह ग्रन्थ पहरेदार का कार्य करता है। इसमें पशुपालन भूगोल विद्या व विज्ञान के विशु तथ्यों का समावेश है। मध्यकाल में पीढ़ी दर पीढ़ी परिवर्तित देवी देवताओं भूत, प्रेत, ईश्वराकार सम्बन्धी मस्तिष्क में बैठी काल्पनिक भ्रान्तियां जहाँ के तहाँ निष्क्रिय हो जाती हैं। यदि सत्यार्थ को तीर एक निशाने असंख्य कहा जाय तो कोई अतिश्योक्ति नहीं। सत्यार्थ प्रकाश का पाठक क्षण–क्षण++ मोक्ष का आनन्द प्राप्त करता है। प्रकाश स्तम्भ सत्यार्थ प्रकाश को बिना पढ़े व्यक्ति अपनी बीमारी नहीं जान पाता है। स. प्र. पढ़ने से मन और मस्तिष्क के दोष दूर हो जाते हैं।

(5) सत्यार्थ प्रकाश और सामाजिक ढांचा–

वैदिक साहित्य के स्वाध्याय से ही व्यक्ति का चहुंमुखी एवं सवार्भंगीण विकास सम्भव है। स्वामी जी चाहते थे कि जाति पांति का बन्धन टूटकर गुण कर्मानुसार और स्वभाव पर आधारित वर्ण व्यवस्था हो, बालकों के वर्ण का चयन गुरुकुलों[1] में उनकी योग्यतानुरुप किया जाय जो ब्राह्मणादि उत्तम कर्म करते हैं वे ही ब्राह्मणादि और जो नीच भी उत्तम वर्ण[2] के गुण कर्म स्वभाववाला होवे तो उसको भी उत्तम वर्ण में जो उत्तम वर्णस्थ होके नीच कर्म करें तो उसको नीच वर्ण में गिनना अवश्य चाहिए। इस व्यवस्था में स्त्री एवं शूद्रों को विभिन्न अधिकारों से वंचित कर सत्यार्थ प्रकाश में डटकर विरोध किया गया। विश्व के इतिहास में सत्यार्थ प्रकाश ही पहला ग्रन्थ है। जिसमें नारी, शूद्रों को पढ़ने के साथ–2 वेदाध्ययन का अधिकार दिया गया। आज की बढ़ती हुई शिक्षाओं में स्त्री शिक्षा का जो स्थान है उसमें सत्यार्थ प्रकाश

+बिना सत्य के कोई व्यक्ति महान नहीं हो सकता। सत्य हजार पर्दे फाड़कर सामने आ जाता है। सत्य का कोई विकल्प नहीं होता तथा सत्य सबका एक होता है।

++ब्रह्म की प्राप्ति और बन्धन की निवृत्ति का नाम मोक्ष है मोक्ष का सुख ऐसा है जिसकी उपमा कोई सांसारिक सुख या पदार्थ से नहीं दी जा सकती। विशाल सांसारिक सुख मोक्ष की तुलना में न्यून व हेय है। मोक्ष सुख राम, कृष्ण व दयानन्द को प्राप्त हुआ था। ज्ञानियों को चाहिए कि वेद मार्ग पर चलकर मोक्ष की कामना करें ऐसा वैदिक विद्वानों का मत है। मोक्ष ही मनुष्य की जीवन यात्रा का गन्तव्य व लक्ष्य है। 36 हजार वर्ष बाद सृष्टि बनती व बिगड़ती है तब तक जीवात्मा मोक्ष सुख भोगती।

*वाग्भट्ट के अनुसार मस्तिष्क शरीररूपी राज्य का कार्यालय है।

का विशेष प्रभाव है। सुशिक्षित स्त्रियां अपने अधिकार पुरुषों की कृपा से नहीं अपनी विशेषताओं के आधार पर पाती हैं।

सत्यार्थ प्रकाश के रचनाकाल में बाल विवाह की प्रथा प्रचलित थी। स्वामी जी ने न केवल बाल विवाह का ही विरोध किया, अपितु स्वयंवर[3] विवाह का समर्थन करते हुए लिखा– लड़का लड़की के अधीन विवाह होना उत्तम है तथा परस्पर विरोधी गुण कर्म स्वभाव वालों का विवाह कभी न होना चाहिए। ये कितने हितकारी सोने जैसे खरे शब्द हैं। अतः सत्यार्थ प्रकाश आर्य समाज की रीढ़ है।

(6) सत्यार्थ प्रकाश और खान–पान–

क्या अपने ही हाथ का खाना और दूसरे के हाथ का नहीं स्वामी जी का उत्तर ''जो आर्यों में श्रद्धा रीति से बनावें तो बराबर सब आर्यों के साथ खाने में कुछ भी हानि नहीं। क्योंकि जो ब्राह्मणादि वर्णस्थ स्त्री पुरुष रसोई बनाने और चौका देने बर्तन मांजने आदि बखेड़े में पड़े रहें तो विद्यादि शुभ गुणों की वृद्धि कभी नहीं हो सके। देखो महाराज युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ में समस्त भूगोल के राजा, ऋषि, महर्षि आये थे, वे सब एक ही पाकशाला से भोजन किया करते थे। जो आज स्वतंत्र देश में अस्पृश्यता[4] रुपी अजगर पनपा हुआ है इस पर स्वामी जी के विचार ठोकर मार देते हैं। शुद्ध आहार पवित्र विचार श्रेष्ठ आचार और धर्मयुक्त व्यवहार ही मानवोन्नति का साधन है। लेकिन जूठा खाने से किसी का उद्धार नहीं हो सकता। जूठा हुक्का, चिलम पीना व्यक्ति के शरीर की हानि के अतिरिक्त मन को भी एक दूसरे का जूठा भोजन न करें। जैसे अपने मुख, नाक, कान, आंख उपस्थ के मल–मूत्रादि के स्पर्श में घृणा नहीं होती लेकिन दूसरे के मल मूत्र में होती है। इससे सिद्ध होता है कि जूठा खाना व्यवहार सृष्टिक्रम से विपरीत ही है। अर्थात् किसी का जूठा न खायें गुरु यदि कोई गलत आदेश देता है तो उसका पालन नहीं करना चाहिए व गुरु में कोई दोष है तो उसका उच्चारण भी कदापि नहीं करना चाहिए। मांसाहार में हिंसा है हिंसा कभी मन की शान्ति नहीं ला सकती और अशान्त मन कभी जीवन में सन्तुष्टि नहीं ला सकता।

(7) सत्यार्थ प्रकाश और राजनीति–

वर्तमान समय में राजनीति में पूंजीवाद भाई भतीजावाद, परिवारवाद, जातिवाद चरम सीमा को पार कर चुका है। इसमें कोई सन्देह नहीं भारतीय जनमानस पर्याप्त संख्या में राजनैतिक, सामाजिक व धार्मिक रूप से पर्याप्त नादान है। जो दिशाहीन होकर आत्मघाती प्रवृत्ति युक्त बन चुका है। जिन लोगों को सलाखों के अन्दर होना चाहिए वे आज राजा बने बैठे हैं। ऐसी परिस्थिति में जनता को सुख नहीं मिल सकता। आज देश[1] में राजनैतिक अस्थिरता एक प्रमुख समस्या है। महर्षि दयानन्द ने

1– श्री राम और श्री कृष्ण गुरुकुल में पढ़कर राजा बने। आज कालेज में पढ़कर नौकर नहीं बन पा रहे हैं। राम और श्री कृष्ण में ऐश्वर्य, धर्म, यश, श्री, ज्ञान और वैराग्य था इसलिए इन्हें भगवान भी कहा गया है।

2– वर्ण 4 हैं ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये जातियां नहीं पदों के नाम हैं।

3– स्वयंवर स्वयं अपने पति का वरण करना।

4– अस्पृश्यता एक राष्ट्र का कलंक है– कल्याण मंत्रालय भारत सरकार।

ने सत्यार्थ प्रकाश के छठे समुल्लास में राजनैतिक अंगों उपांगों की बड़ी ही अच्छी व्याख्या की है। राजनैतिक सार के रूप में स्वामी जी ने लिखा है कि ''एक को स्वतन्त्र राज्य का अधिकार न देना चाहिए किन्तु राजा को सभापति तदाधीन सभा, समाधीन सभा राजा और सभा प्रजा के अधीन और प्रजा राजा सभा के अधीन रहे। राजनीति में यदि धर्म चला जाय तो राजनीति पवित्र हो जाती है यदि धर्म में राजनीति पहुंच जाय तो धर्म भ्रष्ट हो जाता है। राजा का कर्त्तव्य है कि वह समाज में अपराध की वृत्ति को रोके, ना कि बढ़ावा दे। अपराध करने से अपराधी को रोकने के लिए अपराधी को दण्डित करना, जेल में डालना, उस अपराधी पर राज्य की दया है। दया वह नहीं है कि उसे खुला छोड़ रखा जाये। खुला छोड़ देने से अपराधी की अपराध वृत्ति बढ़ेगी। अपराध की क्षमा का वैदिक वाङ.मय में कोई विधान नहीं है। अपराधी को कड़े दंड देकर जेल में रखना ही उसकी क्षमा और दया है। क्षमा इस तरह कि यह तो कहो हमने तुम्हें सुधरने का अवसर दिया, फांसी नहीं दी, इसलिये जेल में रहो और आत्म चिन्तन करो कि अपराध करने के बाद गांधीवादी होना अच्छा था या अपराध करने से बचने के लिये गांधी जी के अहिंसा के रास्ते पर चलना?

1- देश किसका-

मेरी माता व माता की माता व मेरा जन्म इस देश में हुआ तथा मेरे पिता व मेरे दादा व मेरे दादा के दादा का जन्म इस देश में हुआ। इससे यह मेरी मातृभूमि व पितृभूमि है। जन्म भूमि माता व पिता की भूमि मेरी पैतृक भूमि, कर्म करने के कारण यह मेरी कर्मभूमि तथा संस्कार व यज्ञ में इसी भूमि पर करता इसलिए यह मेरी पुण्य भूमि है। कुछ लोग यहां पैदा हुए, कार्य करते, इसलिये उनकी जन्मभूमि व कर्मभूमि है। जो लोग पुण्य कार्य के लिए मक्का, मदीना, येरूशलम, वेटिकन सिटी जाते अतः यह उनकी पुण्य भूमि नहीं है। अतः देश उनका नहीं है। पग-2 भूमि हमारी भूमि है। राष्ट्र का पतन होता है। संस्कृति, शिक्षा और धर्म पर आघात करने से जिसकी संस्कृति जीवित है। वह कांटों के बीच भी मुस्कराता है अतः अपने आप को बचाने के लिए संस्कृति और धर्म बचाइये।

कमाने, खाने और सोने का नाम जीवन नहीं कुछ समय निकाल कर देश, धर्म और सामाजिक कार्य भी करो। यदि मैंने कमाया, खाया और सोये तो हममें और पशु पक्षियों में कोई अन्तर नहीं रहा।

-(शेष अगले अंक में)

हर देश में तू, हर वेश में तू

हर देश में तू, हर वेश में तू, तेरे नाम अनेक तू एक ही है।
तेरी रंग भूमि ये विश्व धरा हर खेल में तू, हर मेल में तू॥
सागर से उठा बादल बनकर बादल से गिरा जल हो करके।
फिर नहर बना नदिया गहरी तेरे भिन्न प्रकार, तू एक ही है॥
सागर की फुहारों में रिमझिम तारों में चमकते ही झिलमिल।
तेरा रूप अनूप है, चारों तरफ बस मैं और तू एक ही हैं॥

गतांक से आगे–

प्रणव परिचय

लेखकः– स्वामी सर्वदानन्द महाराज

अब इस बात पर विचार किया जाता है कि वेदादि सच्छास्त्रों में ब्रह्मपद वाचक 'ओम्' शब्द का निर्देश कहाँ–कहाँ पर किया गया है, उसके स्मरणभूत प्रमाणों का दिग्दर्शन यहाँ किया जाता है–

ओ३म् स्मर ॥ 1॥

यह यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय के 15वें मन्त्र का अंश है जिसका यह आशय है कि जैसे पिता पुत्र को और गुरु शिष्य को उसके कल्याणार्थ सन्मार्ग का उपदेश करता है, ठीक इसी प्रकार परमात्मा सब का रक्षक होने से पिता और अनुशासक होने से सब का परमगुरु है। अतएव वह आत्मा के हितार्थ यह सन्देश दे रहा है कि मृत्यु समय जब आत्मा का शरीर से वियोग होने लगता है तब मनुष्य पूर्वानुभूत विषय वासनाओं के आधीन होकर पुनः पुनः उन वस्तुओं के चित्र को सामने लाता, वासना रज्जु से जकड़ा हुआ अपने को असहाय जानकर नयनों से नीर बहाता और क्लेश पाता है। यह विकट समय सबके लिये समान है। उपर्युक्त वेदवचन आत्मा को सम्बोधन करके यह सुना रहा है कि यह बड़ा ही विषम समय है, संसार यात्रा से अपनी मनोवृत्तियों को हटाकर चित्त से ममता को मिटाकर, मोह जाल से अपने को बचाकर सावधान होकर 'ओम्' पदवाच्य जगदीश्वर के ध्यान में मग्न और उसके ही ज्ञान में संलग्न हो। रोने धोने का अवसर नहीं है। मार्ग किधर है। तू किधर को जा रहा है। प्रवाह सीधा और सरल है, तू मोहावर्त में भ्रम से गोते खा रहा है। यह विकट काल है समय का परीक्षण और अपनी शक्ति का निरीक्षण कर, उत्साह और साहस से उठ, प्राप्तव्य स्थान सन्मुख है, उस ओर गति को बढ़ा, धैर्य को धार, बाजी जीती हुई है प्रमाद से मत हार, संसार के प्रलोभन जो मित्रवत् प्रतीत हो रहे हैं वास्तव में शत्रु हैं, छल है इनके धोखे में मत आ, इनका साथ छोड़ने में ही तेरा कल्याण है। मेरे मित्र ! भुक्त–विषय–वासनाओं के विष से उदास हो जा और उत्साह करके स्थिर स्वभाव होकर प्रभु चरणों के पास हो जा। कितना सुन्दर उपदेश उपर्युक्त वेद वचन के गर्भ में विद्यमान है, परन्तु यह बात लगातार अभ्यास से सिद्ध होगी अन्यथा नहीं।

ओ३म् इत्येतत् ॥ 2॥

यह कठोपनिषद् का वचन है। यम के प्रति नचिकेता का तृतीय प्रश्न है। "भगवन् ! धर्म सुख और अधर्म दुःख का कारण है, यह स्थिर सिद्धान्त है। परन्तु इनसे संसार यात्रा समाप्त नहीं होती। संसार का सुख कितना ही उज्ज्वल क्यों न हो क्लेश लेश से सर्वथा पृथक नहीं होता यह दृष्टिगोचर हो रहा है। भेद केवल इतना ही है कि धर्म यदि स्वर्ण–श्रृंखला है तो अधर्म लोहमयी बेड़ी है, दोनों का फल संसार का बंधन ही है। कर्मवासना रज्जु से जकड़ा हुआ आत्मा संसार यात्रा में गति करता ही रहता है। इस प्रवाह

से हटाने और स्वच्छन्दगति में लाने का निमित्त यदि कोई वस्तु है तो कृपया आप मुझे उसका बोध करावें। इष्टानिष्ट कर्मों का फल सुख दु:ख किसके अधीन है? पुरुष सुख की अभिलाषा करता हुआ दु:ख पाता है अतएव पराधीन जान पड़ता है। शुभा-शुभ कर्म जड़ होने से स्वयमेव फल के उद्भावक नहीं हो सकते हैं। जो इस चक्र का संचालक है मुझे केवल उसी की जिज्ञासा है।

संसार कार्य है अतएव अनित्य है इसका कारण प्रकृति नित्य है तथापि यह संसार के रूप में स्वयं कभी भी परिणत नहीं हो सकती और संसार कभी विलयावस्था में नहीं जा सकता। अतः प्रकृति को संसार दशा में लाने और पुनः संसार को प्रकृति में ले जाने का जो नियम है इसका नियामक कौन है? जड़ वस्तु में ज्ञान नहीं होता उसमें विषयता सम्बन्ध से तो ज्ञान रहता है। अधिकरण या स्वरूप सम्बन्ध से नहीं रहता। गमनशील संसार किसी स्थिरभाव वस्तु के अधीन होना चाहिए। मेरी इच्छा उस वस्तु के जानने की है कृपया उसे बतायें।

भूत-भविष्यत् और वर्तमान काल का अधिकार उन ही वस्तुओं पर होता है जो उत्पन्नशील होती हैं। उत्पद्यमान वस्तु वर्तमान काल को तीन भागों में विभक्त कर देती है अतएव काल की शक्ति समयान्तर में उस वस्तु के नाम को मिटाती है। नित्य वस्तुओं में काल का प्रचार, समान सहचार से है, विषमता से नहीं। इस काल-चक्र का स्वामी सर्वान्तर्यामी है। आप उसको जानते हैं मुझे उपदेश दें।

सारांश यह है कि नचिकेता यम से पूछता है कि भगवन् ! धर्म और अधर्म, कार्य-कारण और भूत, भविष्यत्, वर्तमान काल के व्यापार से पृथक् भूत जो वस्तु है मैं उसका जिज्ञासु हूँ। यम ने उत्तर में यह कहा कि 'ओम् इत्येतत्' वह "ओम्" नाम का नामी है।

तत्रैव सर्वेषां वेदानां तात्पर्यमस्ति।। 3।।

हे नचिकेता ! 'ओम्' पद वाच्य परमात्मा की प्राप्ति में ही सब वेदों का साक्षात् या परम्परा सम्बन्ध से तात्पर्य है। यज्ञ, तप, दान, शुभ कर्मों का अनुष्ठान, सत्संग, स्वाध्याय, सृष्टिक्रम का ज्ञान, परकीय कष्टनिवारण में मन की लगन, धर्मात्मा साधु, सन्त, महात्मा के दर्शन से मन मग्न, सद्विचारों का आविर्भाव सुन्दर स्वभाव, कर्तव्यपालन में रुचि, अतिथिसेवा में अन्तःशुचि, परस्पर प्रेम, न्यायानुसार योग क्षेम इत्यादि उत्तम कर्म परमेश्वर की प्राप्ति के लिये ही किये जाते हैं, यह वेदों का संकेत है। वेदादि सच्छास्त्रों के पठन का मुख्य फल यह ही है यहाँ पर ही मनुष्य-कर्तव्य की परिसमाप्ति है।

एतस्यैव शरणं वरं अविद्यादि क्लेशनिवारणाय।। 4।।

अविद्या, विपरीतज्ञान, संशयज्ञान और अज्ञान यह सब एक दूसरे के साथ मिलते जुलते शब्द हैं, इनके अर्थ में कोई विशेष भेद नहीं। यह ही सब दु:खों की आधार भूमि है। इसका निवारण ही संसार के विच्छेद का कारण है, सब प्रकार के अनर्थों की प्रवृत्ति का मारण, अर्थ ज्ञान पूर्वक 'ओम्' शब्द का उच्चारण, अर्थ विचारानुकूल व्यवहार का धारण ही अविद्यादि क्लेशों के दूर करने का हेतु और संसार सागर से पार होने का दृढ़ सेतु है। नचिकेता के प्रति यम का यह उपदेश है।

-(शेष अगले अंक में)

ऋग्वेद ।। ओ३म् ।। यजुर्वेद

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

श्री विरजानन्द ट्रस्ट, वेदमन्दिर–मथुरा में

चतुर्वेद पारायण यज्ञ

दिनांक 6 दिसम्बर 2025 से 25 दिसम्बर 2025 तक

सभी धर्मप्रेमी सज्जनो!

परमपिता परमात्मा हम लोगों के माता–पिता के समान हैं। हम सब उसकी प्रजा हैं इसलिए हम सब पर वह नित्य कृपादृष्टि रखता है। जैसे अपनी सन्तानों के ऊपर माता–पिता सदैव करुणा को धारण करते हैं। वह चाहते हैं हमारी सन्तानें सदा सुखी रहे, वैसे ही परमात्मा भी सब जीवों पर कृपादृष्टि सदैव रखता है। बिना ज्ञान के हमारा कल्याण कभी सम्भव नहीं है। इसलिए सृष्टि के आदि में ईश्वर ने अपना ज्ञान ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद का प्रकाश चार ऋषियों अग्नि, वायु, आदित्य, अंगिरा के मन में किया फिर उन्होंने सब भूगोल में वेद विद्या को फैलाया। जिनको पढ़–पढ़ा और सुन–सुना के हमारे पूर्वज ऋषि–मुनियों ने धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष की सिद्धि को प्राप्त किया, उसमें परम ज्ञान प्राप्त करके अपने मानव जीवन को धन्य कर गये। इसी प्रकार सबका जीवन धन्य हो इस परोपकार को ध्यान में रखकर आपके अपने श्री विरजानन्द आर्ष गुरुकुल वेद मन्दिर, मथुरा में विगत 17 वर्षों से प्रतिवर्ष चतुर्वेद पारायण यज्ञ का आयोजन रखा जाता है। विद्वानों के प्रवचनों से वेद–ज्ञान की प्राप्ति और साथ में यज्ञ में पवित्र सामग्री से वातावरण शुद्धि का उपाय किया जाता है। इस वर्ष भी आयोजन 6 दिसम्बर से 25 दिसम्बर 2025 तक निर्धारित किया है। धार्मिक कार्य सर्वसाधारण के कल्याण की कामना को ध्यान में रख के आयोजित किये जाते हैं। यदि उनमें सभी सज्जनों का सहयोग न हो तो उनका पूरा होना असम्भव है यदि सम्भव हो भी जाय तो सबका उपकार न होने से निरर्थक भी है। इस आयोजन की सार्थकता आप सबके ऊपर ही है क्योंकि आपके लिए है और आप सबका है। इस बात को ध्यानमें रखकर अपना दायित्व समझ कर स्वयं यजमान बनें और अन्य सज्जनों को प्रेरित कर पुण्य लाभ कमायें। कार्यक्रम प्रतिदिन दो सत्रों में चलेगा प्रातः 9.00 बजे से 12.00 बजे तक और दोपहर 2.00 बजे से 5.00 बजे तक। आप किसी भी दिन किसी भी सत्र में यजमान बन सकते हैं। यजमान बनने के इच्छुक अपनी तिथि पहले से ही लिखवा दें तो उत्तम रहेगा। यज्ञ में निरन्तर रहने वालों के लिए आवासीय व्यवस्था आश्रम में ही रहेगी।

–सम्पर्क सूत्र: 9456811519

निवेदक

(अध्यक्ष)	(मंत्री)	(कोषाध्यक्ष)
आचार्य स्वदेश	डॉ0 प्रवीण कुमार अग्रवाल	दिनेशचन्द्र बंसल

विशेष: गुरुकुल में आने के लिए मथुरा आकर वृन्दावन जाने वाले वाहनों से मसानी चौराहा पर उतरें, पूर्व की ओर जाने वाले मार्ग पर मात्र 200 कदम पर वेदमन्दिर है।

सामवेद अथर्ववेद

शुद्ध हनुमच्चरित, दो बहिनों की बातें, दो मित्रों की बातें, सुमंगली, आर्यों की दिनचर्या, नित्य कर्म विधि आदि अनेकानेक पुस्तकों का प्रकाशन करवाकर पुण्य अर्जित कर अपने पूज्य पिताजी के विमल यश को चिरस्थायी किया। वे केवल श्री विरजानन्द ट्रस्ट जैसी शतशः आर्य संस्थाओं के आधार स्तम्भ थे। प्रत्येक आर्य को उनके नेतृत्व व आस्था पर गर्व था। आजीवन विपरीत परिस्थितियों में भी उन्होंने आर्य समाज के कार्यों में कभी भी शिथिलता नहीं आने दी। उनके नेतृत्व में स्वदेश और विदेश में अनेक अन्तर्राष्ट्रिय आर्य सम्मेलनों का ऐसा सफल आयोजन किया जिसको आर्य जगत् में सदैव स्वर्णिम अक्षरों में लिखा जायेगा और आर्य लोग सदैव उनकी स्मृति के रूप में स्मरण करते रहेंगे।

उनके जैसे व्यक्तित्व को खोकर आर्य जगत् स्तब्ध और दु:खी है उनके स्थान की पूर्ति करना असम्भव सा लगता है। उनका विरोधी भी उनके सौम्य व्यक्तित्व के आगे नतमस्तक था। या यों कहें कि वे आर्यजगत् में अजात शत्रु के रूप में प्रतिष्ठित रहे। प्रत्येक विपरीत परिस्थिति में धैर्यता से भरी उनकी सौम्य मुस्कान प्रत्येक कार्यकर्त्ता में नई ऊर्जा का संचार कर देती थी। वे प्रत्येक आर्य और आर्यवीर दल के कार्यकर्त्ता के पितृ तुल्य संरक्षक थे। सामान्य कार्यकर्त्ता के दु:ख को अपना दु:ख समझ कर सहारा देकर समाधान करते थे। इतने उच्च पद पर आसीन होकर भी उनमें अहंकार भाव छू तक नहीं पाया था। छोटे-छोटे सम्मेलन में भी वे उसी उत्साह से कार्यकर्त्ता का मनोबल बढ़ाते थे जैसे कोई महासम्मेलन में मनोबल को बढ़ाता है। सहयोग करके सम्मेलन करने वाले कार्यकर्त्ता का मनोबल टूटने नहीं देते थे। न कार्यकर्त्ता यह समझता था कि हम असहाय हैं उनके रहते हुये किसी को भी किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहती थी। ऐसे व्यापक नेतृत्व का हमारे बीच से अभाव हो जाना अत्यन्त क्लेशदायक है। हम सब उनके वियोग से अत्यन्त दु:खी हैं। नेतृत्व करने वाला ऐसा सौम्य, सक्षम, ऊर्जा प्रदान करने वाला पिता के समान सबका संरक्षण करने वाला अब दृष्टिगोचर नहीं होता। ये गुण हों भी तो महर्षि दयानन्द महाराज के प्रति अगाध निष्ठा रखने वाला ऐसा कहाँ मिलेगा। पर शाश्वत नियम के आगे हम सब असहाय हैं जो प्रभु का विधान है उसे कोई परिवर्तित नहीं कर सकता। उसी के अन्तर्गत हमारे माननीय प्रधान श्री सुरेशचन्द्र आर्य का चिरवियोग है।

हम सब का यह गुरुत्तर दायित्व है कि हम सब उस महान आत्मा से प्रेरणा लेकर अपने स्वार्थ भावों को एक तरफ कर प्रभु आदेश को शिरोधार्य कर अपने कर्त्तव्य का निर्वहन करें और समस्त संसार का उपकार करके संस्था के काम को तन-मन-धन से आगे बढ़ाकर उस देवता को सच्ची श्रद्धांजलि समर्पित करें। अन्यथा कृतघ्नता का घोर पाप हम सबको लगेगा। आशा है उस सौम्य, मधुर, सर्वग्राही व्यक्तित्व से प्रेरणा सम्पूर्ण आर्य जगत आगे बढ़ेगा और उनके स्वप्नों को साकार करेगा। एक बार हम अपनी समस्त संस्थाओं की ओर से उन्हें विनम्र श्रद्धांजलि समर्पित करते हुए संकल्प लेते हैं हम आर्य समाज के पवित्र आन्दोलन को शिथिल नहीं होने देंगे। ऐसी प्रेरणा प्रभु प्रत्येक आर्य के हृदय में करे।

ओ३म् शम्

सत्य प्रकाशन मथुरा के अनमोल प्रकाशन

शुद्ध रामायण सजिल्द	320.00
शुद्ध रामायण अजिल्द	250.00
योग दर्शन	150.00
शंकर सर्वस्व	120.00
मानस पीयूष (रामचरित मानस)	100.00
शुद्ध हनुमच्चरित	90.00
शुद्ध कृष्णायण	80.00
शान्ति कथा	80.00
नित्य कर्म विधि	70.00
सुमंगली	70.00
दो मित्रों की बातें	60.00
दो बहिनों की बातें	60.00
वैराग्य दिवाकर	50.00
वैदिक संध्या विधि	50.00
महर्षि दयानन्द का दार्शनिक चिन्तन	50.00
वैदिक स्वर्ग की झांकियाँ	50.00
चाणक्य नीति	50.00
महाभारत के प्रेरक प्रसंग	50.00
स्वाधीनता की वीरांगनायें	40.00
महर्षि दयानन्द का निरालापन	35.00
वेद प्रभा	30.00
वीर नारियां	30.00
वीर बालिकायें	30.00
आदर्श देवियां	30.00
भारत और मूर्ति पूजा	30.00
यज्ञमय जीवन	30.00
आर्यों की दिनचर्या	30.00
दादी पोती की बातें	25.00
चार मित्रों की बातें	20.00
भारतीय संस्कृति के तीन प्रतीक	20.00
मील का पत्थर	20.00
भ्रांति दर्शन	20.00
शान्ता	20.00
संध्या रहस्य	20.00
गीता तत्व दर्शन	20.00
गृहस्थ जीवन रहस्य	20.00
श्रीमद् भगवत गीता	20.00
वैदिक ऋषिकाएं एवं विदुषी नारियां	20.00
आदर्श सती नारियां	20.00
नरदेव गीत माला	20.00
नरदेव भजनावली	20.00
नरदेव पुष्पांजलि	20.00
नरदेव गीतांजलि	20.00
नरदेव गीत प्रकाश	20.00
नरदेव सुमन	20.00
नरदेव गीत ज्योति	20.00
गीत गगन	20.00
नारी गौरव गान	20.00
सत्यनारायण गीत कथा	20.00
दयानन्द और विवेकानन्द	15.00
शुद्ध सत्यनारायण कथा	15.00
महाभारत के कृष्ण	15.00
महिला गीतांजलि	15.00
रामायण कालीन आदर्श नारियां	15.00
महाभारत कालीन आदर्श नारियां	15.00
इतिहास के स्वर्णिम पृष्ठ	12.00
बाल मनुस्मृति	12.00
ओंकार उपासना	12.00
पुराणों के कृष्ण	12.00
दण्डी जी का जीवन पथ	10.00
नमस्ते ही क्यों (प्रेस में)	
आदर्श पत्नी	10.00
देश विदेश की वीर बालिकाएं	10.00
पतिव्रता नारियां	10.00
सती वीरांगनाएं	10.00
आदर्श माताएं	10.00
वीर गाथा	10.00
खूं ख्वार मौला	10.00
भयंकर भूल	10.00
ब्रजभूमि और कृष्ण	8.00
सच्चे गुच्छे	8.00
भागवत के नमकीन चुटकुले	8.00
मानव तू मानव बन	8.00
जीजा साले की बातें	5.00
सर्प विष उपचार	4.00
सत्यार्थ प्रकाश मेरी दृष्टि में	4.00

आवश्यक सूचना

1. पाठकगण वर्ष 2025 के लिये वार्षिक शुल्क 200/- रूपये अविलम्ब भिजवायें तथा पन्द्रह वर्ष की सदस्यता हेतु 2100/- भिजवायें।
2. पत्रिका भेजने की तारीख प्रतिमाह 7 व 14 है, कृपया ध्यान रखें।

बुक-पोस्ट
छपी पुस्तक/पुस्तिका

सेवा में
.... भा
मान रोड, नईदिल्ली-।
....
....
....
.... पिन कोड ....

पत्र व्यवहार का पता :-
व्यवस्थापक - कन्हैयालाल आर्य
सत्य प्रकाशन
डाकघर- गायत्री तपोभूमि, वृन्दावन मार्ग
(आचार्य प्रेमभिक्षु मार्ग), मसानी चौराहे के पास,
मथुरा (उ० प्र०) 281003
मोबा. 9759804182

Yogendra # 9927136600

मुद्रक : स्वामी, प्रकाशक, सम्पादक आचार्य स्वदेश के लिए मित्तल कम्प्यूटर प्रिंटर्स, वृन्दावन रोड, मथुरा में छपकर सत्य प्रकाशन मथुरा से प्रकाशित